

अमिथ हलाहल मदभरे

सपादक

श्रीगोपाल गोस्वामी

शोध सहायक

भा वि म शोधप्रतिष्ठान श्रीकानेर



भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान
श्रीकानेर (राजस्थान)

भारतीय विद्या मन्दिर ग्रन्थमाला-३

● परामश मंडल

श्री नरोत्तमदास स्वामी श्रेम श्रे

श्री नाथूराम खडगावत श्रेम श्रे

श्री अक्षयचन्द्र शर्मा श्रम श्रे

श्री गभूदयान सक्सेना

● प्रथम संस्करण

भा० स० १८८४ [१९६२ ई०]

● मूल्य चार रुपये

● प्रकाशक

भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान

बीकानेर [राजस्थान]

● मुद्रक

एजुकेशनल प्रेस बीकानेर

आभार

“अमिय हलाहल मदभरे” को विज्ञ पाठकों को सौंपते हुए हमें बड़ी प्रसन्नता हा रहा है। प्रथम निर्माण में दोहा के प्राचीन ग्रंथों और दाहाकार का बड़ा योग रहा है विज्ञेयत अनूप सम्पन्न लाइब्रेरी के “दाहा रत्नाकर” का। अतः हम इन सभी ज्ञात-अज्ञात दाहाकारों और कवियों के प्रति अपना आभार प्रदर्शित करते हैं। आ अनूप संस्कृत लाइब्रेरी के अधिकारियों के प्रति हम अपना आभार प्रकट करना नहीं भूल सकते कि इन्होंने हमारे शोध सहायक श्री गार्वामा का अध्ययन की सभा सुविधाएँ प्रदान कीं।

प्रथम माला के प्रकाशन में राज्य शिक्षाधिकारी श्री जगन्नाथ सिंह जी मेहता और कुंवर श्री नरवन्त सिंह जी का अतुलनाय सहयोग रहा है। हम किन्तु शब्दों में उनका आभार प्रकट करें।

मूलचन्द पारीक

रजिस्ट्रार

भारतीय विद्या मंदिर, दीवाना

दो शब्द

श्री आगापाल जी गोस्वामी व "अमिय हलाहल मदभने" ग्रंथ का प्रकाशित करते हुए हमें बड़ी खुशी हो रही है। बड़े परिश्रम से यह ग्रंथ तैयार किया गया है। आगों व विभिन्न व्यापारों और उनकी भाव भंगिमाओं पर ऐसे चुभते और मनमाहक दाह का इतना बड़ा सकलन अन्यत्र नहीं मिलता। यह अपने ढंग का पहला सकलन है।

वाक्य और सौंदर्य शास्त्र में आर्त्ता का बनावट, उनकी भंगिमा और उनके विभिन्न व्यापारों का बड़ा महत्व है। प्राचीन काल से ही कलाकारों और कवियों का ध्यान इस आर गया है। सभी कवियों ने चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान आर्त्ता की पवित्रता और उनके "अनबोले बाल" की करामात पर अपना लेखनी के दा प्रसून चढाये हैं। परम्परागत साहित्य धारा की इस विधा का संपूर्ण निदर्शन कराने का भेष सपादक का है। वर्गीकरण के द्वारा यह काम बड़ी खूबी से किया गया है। हमें विश्वास है कि यह ग्रंथ अधिक से अधिक हाथ में पहुँचेगा और प्रत्येक साहित्य प्रेमी पाठक इस महत्वपूर्ण ग्रंथ के अध्ययन से लाभ उठायेगा। इत्यन्तम् ।

सत्यनारायण वारीक

अध्यक्ष

भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर

प्रस्तावना

काव्य साहित्य का मूल उद्देश्य आनन्द की प्राप्ति माना गया है।^१ इस आनन्द की उपलब्धि हेतु प्राचीन काल से कवि-गणों द्वारा मत्त प्रयत्न होते रहे हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ 'प्रमिय हलाहल मदभरे' मुक्तक काव्य धारा के ४२२ मुक्तकों का सङ्कलन है। हिन्दी राजस्थानी के मुक्तक साहित्य में 'दाहा' सर्वाधिक प्रयुक्त हुआ है। लघु काव्य तथा अर्थ गाभीय की दृष्टि से अनमानस ने 'दोहे' को अर्थ छंदों की अपेक्षा श्रेष्ठतम घोषित किया —

पुण मदर बूहो धरी गह महेली मित्त ।

छवा आणत तार है, गीत प्रमान कवित्त ॥

छोटी तुक का बूहडा, कवित्त छंद का भूप ।

जाणे बलराइ छलण कू कियोअ बामन रूप ॥^२

रहीम का 'सिमिटि चढ नट कुडली' तो प्रसिद्ध है ही। तदुपरान्त अग्रभ्रष्ट साहित्य के विकास-काल से लेकर वर्तमान तक विभिन्न विषयों पर लक्ष्य-लक्ष्यावधि दोहों की उपलब्धि इस छंद की सर्वाधिक लोकप्रियता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। प्रस्तुत सङ्कलन में मात्र आठों से सन्धित 'दाहों' की उपलब्धि भी उपयुक्त प्रमाण को परिपुष्ट करती है।

ज्ञानेन्द्रियों में नेत्र प्रधान हैं। नेत्रों का जितना सम्बन्ध अन्तःकरण से है उतना अन्य इन्द्रियों का नहीं। नत्रों का ही एक मात्र माध्यम ऐसा है, जो भोग के अभाव में मन को कुण्ठाग्रस्त नहीं होने देता है और प्रेम की अधिकाधिक वृद्धिगत करता है, वियोगाग्नि में जलने से बचाता है।^३

१ मन्तराम कवि और आचार्य

२ दाहासुताकर, पत्र ३६४ २, दोहा संख्या ६४, ६५

३ मन्तराम कवि और आचार्य

य भाँति केवल देखनी ही नहीं है बल्कि—डूँतो हैं, उलभती हैं, रोनी हैं, भरती हैं, डलती हैं, इनराता हैं, भरती हैं नाचती हैं, पीती हैं, दीडती हैं, अकुलानी हैं सञ्चुचाती हैं अटकती हैं तरसाती हैं, डबती हैं हँसती हैं, दुखी होती हैं रोभता हैं मारती हैं जिजानी हैं पागल बनानी हैं चकित होती हैं, पूनती हैं लगती हैं, सञ्चती हैं, पकना हैं, हारती हैं निहारती हैं, सटपटाती हैं अलसाती हैं, मुसक राती हैं, मिलती हैं, शक करती हैं गिरती हैं गडनी हैं टपकती हैं, पूटती हैं, बेघती हैं, चमडती हैं, और न जान क्या क्या करती हैं ।

यह 'आखें' इतन काय करन वाली हान पर भा सौम्य आदि शास्त्र प्रणेतारों की दृष्टि में चाहे कर्मोद्दिष्ट नहीं बा सबी हैं परन्तु हमारे कवियों ने इन्हे केवल आनेद्दिष्ट माना हो ऐसी बात नहीं है उन्हे इसका वापछत्र को पर्याप्त विशाल माना है और अय इन्द्रिया की अपेक्षा इसके बल्यन को प्रमुखता दी है ।

सब प्रकार के बल्यनों की भाँति आखें का बल्यन भी दो प्रकार का प्राप्त होता है—

(१) वस्तुपरक

(२) भावपरक

वस्तुपरक बल्यन में नयनों की बनावट सम्बन्धी दृश्य—सरल, तरल, तीखे, कुटिल, असित सत, रत्नार, अक्षण उज्ज्वल, चपल, कजरारे, अनियारे आदि शब्दों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है । क्योंकि वस्तुपरक बल्यन बाह्य सौन्दर्य का बल्यन होता है इस प्रकार के बल्यन में विद्वानों का मत है कि परम्परागत अवधि में आबद्ध रहकर उही विशिष्ट उपमानों का आश्रय लेना पड़ता है, वे ही परम्परागत विवेचण प्रयुक्त करने पड़ते हैं । जहाँ वही भी अप्रस्तुत एवं विशेषणों का प्रयोजन है वहाँ श्रोता और वक्ता दोनों की दृष्टि में वही एक सीमाबद्ध स्वरूप उपस्थित रहता है ।^१

व्यक्ति अभिमत नयना के एकांगी बल्यन में माना जा सकता है किन्तु जहाँ नयनों का सर्वांगीण बल्यन करत हुए सर्वांगीण रूप प्रस्तुत किया जाता है वहाँ कवियों की कल्पना

अनुठी उठाने भरने को स्वतंत्र है। ऐसा हुआ भी है। वहाँ वे अप्रस्तुतों को प्रत्यक्ष करने में स्वच्छन्द रह कर भी सफल व सिद्ध हुए हैं।

झाँखा के वस्तुपरक परम्परागत उपमान ध्वेत, नील व रक्त वण क कमल, विभिन्न पुष्प मग, खजन विभिन्न गन्ध आदि हैं। इन उपमानों का प्रयोग आदि काव्य से लेकर बतमान पद्य के काव्यों में निष्ठापूर्वक हुआ है।

भावपरक वणन^१ में हयता नहीं होती है। 'भिन्न र्चिह्नलोक के आधार पर विभिन्न अनुभूतियों के द्वारा विभिन्न भावों का प्रमविष्णु वणन, प्रेम क ऐन्द्रिय और गुद दोनों रूपा में सामन आता है। कवि जिस वस्तु को देखता है उसकी प्रतिक्रिया उमक मन पर होती है। उसके प्रभाव से अनुभव करक वह अपने शब्दों में उस प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के वणन में पाठक को तब तक भानन्द की उपलधि नहीं होनी जब तक कि वह कवि से तादात्म्य स्थापित करता हुआ उसकी भावभूमि तक पहुँचकर उस अभिव्यक्ति को हृदयगम न कर ले।

चाहे स्थूल उपमानों द्वारा अभिव्यञ्जित रीतिकालीन वणन हो या भावोद्भेक की स्थिति में स्थूल वस्तु के दशनोपरान्त उत्पन्न हुई प्रतिक्रिया की व्यञ्जना हो, दोनों स्थितियों में गहन अनुभूति से ही मानसिक भानन्द प्राप्त है। क्योंकि अनुभूति ही सहृदय के मन में अनुभूति जगाती है कल्पना ता, अनुभूति को सहृदयता प्रयण का साधन है पर तु वाच्य का संवेच तो अनुभूति ही है।

भावपरक वणन में विशेषणों की मुक्तियुक्तता की आवश्यकता होती है। चित्रोपमता के साथ-साथ भावोद्दीपन क्षमता के सुचारु सन्निवग का महत्त्व होता है।^२

भावों को उद्दीप्त करने के लिए जीवन्त चित्रा को प्रस्तुत करने वाले रीतिक एवं रीति मुक्त वणन में जहाँ आधुनिक विशेषणों का प्रयोग हुआ है वहाँ व्यया भर चित्रा से साक्षात्कार होते ही विरह और वेदना की गम्भीरता अनुभव होन लगती है

१ महिराम कवि और आचार्य,

२ हिन्दी सा० का वृ० इति०—दा० नभद्र

ये आँखें केवल देखती ही नहीं है बल्कि—डूँबती हैं, उलभती हैं, राती हैं, भरती हैं ललती हैं, इनराला हैं, भरती हैं नाचती हैं, पीती हैं, दोड़ती हैं, अकुनाती हैं सक्नुवाती हैं अटकती हैं, तरमाती हैं डूबती हैं हँसती हैं, दुखी होती हैं रोभती हैं मारती हैं, जिलाना ह पागल बनाना है, अकित होती है पूनती हैं लगती हैं लडता हैं, यकना हैं, हारती हैं निहारती है सटपटाती हैं अलसाती हैं मुसक रूती हैं, मिलती हैं, इस्क करती हैं गिरता हैं गडती हैं टपकती हैं, फूटती है, वेधती हैं, उमडती हैं, और न जान क्या क्या करती है ।

यह 'आँखें' दूतन काय करने वाली हान पर भी साँस्य आदि सास्त्र प्रयोत्ताओं की दृष्टि में चाहे कर्मोद्भय नहीं बन सकी हैं, परन्तु हमारे कवियों ने इस केवल नानेन्द्रिय माना हो एही बात नहीं है उन्हींने इसका कायधन को पर्याप्त विगाल माना है और अन्ध इन्द्रियों की अशुभा इसके बलान को प्रमुखता दी है ।

सब प्रकार के वरणों की भाँति आँखों का वरण भी दो प्रकार का प्राप्त होता है—

(१) वस्तुपरक

(२) भावपरक

वस्तुपरक वरण में नयनों की बनावट सम्बन्धी दृश्य—सरल, तरल, लीखे, कुटिल, असित सेत, रतनार, अफला उज्ज्वल, चपल कजरारे, धनिधारे आदि शब्दों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है । क्योंकि वस्तुपरक वरण बाल्य सौन्दर्य का वर्णन होता है इस प्रकार के वरण में विद्वानों का मत है कि परम्परागत अवधि में आवद्ध रहकर उही विविष्ट उपमाना का आश्रय लेना पड़ता है, वे ही परम्परागत विरोपण प्रयुक्त करने पड़ते हैं । तब वही भी अप्रस्तुता एवं विरोपणा का प्रयोजन है वहा श्रोता और वक्ता दोनों की दृष्टि में वही एक सीमाबद्ध स्वरूप उपस्थित रहता है ।^१

कवित्त अभिमत नयनों के एकांगी वरण में माना जा सकता है किन्तु जहाँ नयनों का सर्वांगीण वरण करते हुए सर्वावत रूप प्रस्तुत किया जाता है वहाँ कवियों की कल्पना

अनुभूती उठाने भरने का स्वतंत्र है। ऐसा हुआ भी है। वहाँ वे अप्रस्तुतों को प्रत्यक्ष करने में स्वच्छन्द रह कर भी सफल व सिद्ध हुए हैं।

श्रीला के वस्तुपरक परम्परागत उपमान श्वेत, नील व रक्त वरुण क कमल, विभिन्न पुष्प मृग, खजन विभिन्न राश्र आदि हैं। इन उपमानों का प्रयोग आदि काव्य से लेकर वर्तमान पद्य तक काव्यों में निष्ठापूर्वक हुआ है।

भावपरक वर्णन^१ में इयता नहीं होती है। 'भिन्न रुचिहिलाक के आधार पर विभिन्न अनुभूतियों के द्वारा विभिन्न भावों का प्रभविष्णु वर्णन, प्रेम के ऐन्द्रिय और गुद दोनों रूपा में सामन आता है। कवि जिस वस्तु को देखता है उसकी प्रतिक्रिया उसके मन पर होती है। उसके प्रभाव से अनुभव करके वह अपने शक्तों में उस प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के वर्णन में पाठक को तब तक आनन्द की उपलब्धि नहीं होती जब तक कि वह कवि से तादात्म्य स्थापित करता हुआ उसकी भावभूमि तक पहुँचकर उस अभिव्यक्ति को हृदयगमन कर ले।

चाहे स्थूल उपमानों द्वारा अभिव्यञ्जित रीतिकालीन वर्णन हो या भावोद्भेक की स्थिति में स्थूल वस्तु के दशनीपरान्त उत्पन्न हुई प्रतिक्रिया की व्यञ्जना हो, दोनों स्थितियों में गहन अनुभूति से ही मानसिक आनन्द प्राप्त है। क्योंकि अनुभूति ही सहृदय के मन में अनुभूति जगानी है कल्पना तथा, अनुभूति को सहृदयता प्रणय का साधन है परंतु वाच्य का संवेध तो अनुभूति ही है।

भावपरक वर्णन में विशेषणों की युक्तियुक्तता की आवश्यकता होती है। विशेषमता के साप-साप भावोद्दीपन क्षमता के सुचारु सनिवश का महत्त्व होता है।^२

भावों को उद्दीप्त करने के लिए जीवन्त चित्रा को प्रस्तुत करने वाले रीतिगत एवं रीति मुक्त वर्णन में जहाँ आश्रयगत विधापरणों का प्रयोग हुआ है वही व्यथा भर चित्रा से साक्षात्कार होते ही विरह और वेदना की गम्भीरता अनुभव होन लगती है

१ मन्तराम कवि और आचार्य ।

२ दिन्दी सा० का वृ० इति०—डा० नगन्द्र

ये ग्राम केवल देखनी ही नहा है बल्कि—डूँढनी हैं, उलभती हैं, रोनी हैं, मरती हैं, बनती हैं, इतरानी हैं, भरती हैं नाचती हैं, पीती हैं, दीडती हैं, अकुनाती हैं सकुचाती हैं अटवती हैं तरसाती हैं डूबती हैं हँसती हैं, दुखी होती हैं रोभनी हैं मारती हैं, िलानी ह पागल बनाती हैं चकित होती हैं, पूनती हैं लगती हैं नशता हैं, चक्ना हैं, हारती हैं निहारती हैं, सटपटाती हैं अलसाती हैं, मृसक रूनी हैं, मिलती हैं, इश्क करती हैं गिरती हैं गडती हैं, टपकती हैं, फूटती हैं, चपती हैं, उमडती हैं, और न जान क्या क्या करती हैं ।

यह 'ध्रौं' इतने काम करने वाली हान पर भा सात्य आदि सास्त्र प्रणेतार्यों की दृष्टि में चाहे कमोद्भय नहीं बन सकी हैं, परंतु हमारे कविया ने इस केवल नानेद्भय माना हा ऐसी बात नहा है उ र्ोंने इसक कायधन को पर्याप्त विगाल माना है और अय श्द्रियो की अपक्षा इसक बणन को प्रमुखता दी है ।

सब प्रकार क वर्णनो की भांति आखो का बणन भी दो प्रकार का प्राप्त होता है—

(१) वस्तुपरक

(२) भावपरक

वस्तुपरक बणन में नयनों की बनावट सम्य धी दृश्य—सरल, तरल, सीधे, कुटिल, अक्षित भेत, रतनार, घट्टण उज्वल, चपल, कजरारे, अनियारे आदि शब्दो द्वारा प्रस्तुत किया जाता है । क्योंकि वस्तुपरक वर्णन बाह्य सौम्य का वर्णन होता है इस प्रकार के बणन में विद्वानो का मत है कि परम्परागत अर्थाधि में आबद्ध रहकर उही विशिष्ट उपमाना का आश्रय लेना पडता है, व ही परम्परागत विशेषण प्रयुक्त करने पडते हैं । जहाँ कहा भी अप्रस्तुता एवं विशेषणों का प्रयोजन है वहाँ श्रोता और वक्ता गोनो की दृष्टि में वही एक सीमाबद्ध स्वरूप उपस्थित रहता है ।^१

कवित्त अभिमत नयनों के एकांगी बणन में माना जा सकता है किंतु जहाँ नयनों का सर्वांगीण बणन करते हुए समन्वित रूप प्रस्तुत किया जाता है वहाँ कवियों की कल्पना

मूठी उड़ाने भरने की स्वतंत्र है। ऐसा हुआ भी है। वहाँ वे अप्रमत्तों की प्रत्यक्षा करने से स्वच्छन्द रह कर भी सफल व सिद्ध हुए हैं।

श्रीलोक के वस्तुपरक परम्परागत उपमान श्वेत, नील व रक्त वण के कमल, विभिन्न पुष्प मग, खजन विभिन्न शस्त्र आदि हैं। इन उपमानों का प्रयोग आदि काव्य से लेकर वतमान पद्य के काव्यों में निरन्तर ही हुआ है।

भावपरक वणन^१ में इयता नहीं होती है। 'भिन्न रुचिहिलोक' के आधार पर विभिन्न अनुभूतियों के द्वारा विभिन्न भावों का प्रमविष्णु वणन, प्रेम व इन्द्रिय और शुद्ध दोना रूपा में सामन आता है। कवि जिस वस्तु को देखता है उसकी प्रतिक्रिया उसके मा पर होती है। उसके प्रभाव से अनुभव करके वह अपने शब्दों में उस प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के वणन में पाठक को तब तक आनन्द की उपलब्धि नहीं होती जब तक कि वह कवि से तादात्म्य स्थापित करता हुआ उसकी भावभूमि तक पहुँचकर उस अभिव्यक्ति को हृदयगमन कर ले।

चाहे स्थूल उपमानों द्वारा अभिव्यञ्जित रीतिवालीन वणन हो या भावोद्देक की स्थिति में स्थूल वस्तु के दशनोपरान्त उत्पन्न हुई प्रतिक्रिया की यञ्जना हो, दोनों स्थितियों में गहन अनुभूति से ही मानसिक आनन्द प्राप्त है। क्योंकि अनुभूति ही सहृदय के मन में अनुभूति जगाती है कल्पना ता, अनुभूति की सहृदयता प्रेरण का साधन है पर तु काव्य का सवेद्य तो अनुभूति ही है।

भावपरक वणन में विशेषणों की युक्तियुक्तता की प्रायः यकता होती है। चित्रोपमता के साध-साध्य भावोद्दीपन क्षमता के सुचारु सन्निवग का महत्त्व होता है।^२

भावों को उद्दीप्त करने के लिए जीवन्त चित्रा को प्रस्तुत करने वाले रातिगत एक रीति मुक्त वणन में जहाँ भाव्यगत विशेषणों का प्रयोग हुआ है वहाँ व्यथा भर चित्रा से सादास्वार होते ही विरह और वेदना की गम्भीरता अनुभव होन लगती है

१. मनिराम कवि और आचार्य ।

२. हिन्दी सा० का वृ० इति०—टा० नोभद्र

धीर ध्यानम्बनगत वर्णनों में एन्द्रिय विलासक सद्योगजय भोग की विह्वलता प्रकट होती है ।^१

‘नन’ के एषागो वर्णन में भोंहें, पत्रकें, बरौनियी, कोए, तिन, हट्टि, चितवन मपांग, भ्रांसू काजल रक्तिमा, ओर नीद आदि से सम्बन्धित असकृत व्यञ्जना मानव हृदय के कोमल ओर मधुर भावों के तारों को धीर से झडूत कर देती है । ओर नन केन्द्रिय के समन्वित वर्णन में भी ऐसे साहित्य की प्रचुरता है जो पीडित व सतप्त मन को रस सीकरयुक्त मधुरमलयानिल से व्यञ्जन करते हुए प्रेम के द्विष्टोत्स में धान धान भुजाने वाला है ।^२

भावों के उद्दीपन में सहायक क्रिया मूलक विभाषणों की जो भरमार धालों के लिए है वह अत्य प्रवयव के वर्णन में दुलभ है या असम्भव है ।

क्रियामूलक विशेषणा की लम्बी सूची है जिनमें कुछ ये हैं अनखोहे, सतरौहे, हं, डरारे भरसान सरसाने, दुरान गीद घुरान, लडते, तिलोछे, लगीं हे, नर्षोहे, उडोहे हसोहे, मोहिन अलसोहे, उनदोहे आदि ।

वृत्तद्वितान्त विशेषणों में, छक, बने, छय, रुंधे रसमरे, पमपग, रगमगे, सलीने, लीने गड भार रसीने, निगोडे, गमघादि हैं ।

जहां ननो का स्त्रीलिंग में प्रयोग है वहां—

कनोठी (दोठि), घण्पनी (चितवनि), रुखी (रुख) अनसभरी (भोलिया) आदि हैं ।

उपयुक्त भाव भर विशेषणों का रसास्वादन एक विनिष्ट भावभूमि की गहराई में पहुँचकर ही किया जा सकता है । भावपरक वर्णन के ध्यान की अनुभूति विषयगत अधिक है वस्तुगत न्यून । अरसिकों का यह सुलभ नहीं है ।

मनियारे तीखे, बढेरे, करेरे, विशाल, सुरग, चचल, असित, सित, अरुण, आदि विभाषण वर्ण व भाकार प्रवार के धानक हैं । इन विभाषणों से चाक्षुष चित्र समझ

१ हिन्दी साहित्य का वृहत् खत०—डा० नगेन्द्र

२ सतिराम कवि और आचार्य

करने में सहायता मिलती है। पर जहाँ क्रियाभूतक विभेपण का उचित प्रयोग होता है वहाँ एक विभेय प्रकार के व्यापार की कल्पना करन पर ही धानन्द की उपसन्धि होती है।

सम्भोग शृ गार व विप्रलम्भ शृ गार दोनों के वर्णन का आश्रय भावें हैं पर शृ गार की भाविति यहाँ 'दगन' तक म ही जानी है अथवा प्राय विप्रलम्भ या धयोग रहता है— किन्तु यह 'दगन', सयाग का सब प्रथम सापान है जा परम शुद्ध है।

चराचर जगत् क वर्णन रूप व आकार का पान करवाने वाली इस ज्ञानद्विय का हिंदी साहित्य में निम्न पर्यायो द्वारा व्यवहार हुआ है —

नन, नयन, नना
 धौष, भौधिया धौधें
 लोषन, नोयन या लाइन
 चल, दग, ईछन, दीठि, दस व नेत्र।

इसने पर्यायो क हाते हुए भा 'नन' का प्रयोग करना प्राय सभी कवियों को रुचिकर रहा पात होता है। इस सकलन के दोहों में भी 'नन' का प्रयोग अतिशयता से हुआ है। दोष पर्यायों का प्रयोग कतिपय स्थानों पर ही हुआ है।

कवि रसनिधि भी इन ननों के आश्रय के गिकार हुए से लगते हैं तभी तो उन्होंने इनकी व्यत्यपूर्ण व्युत्पत्ति की है—

प्राप्तु सगित वेवत मनहि, रसनिधि कर बिनु दाम ।
 ननन मे 'न' नाहिने, यातें नना नाम ।।
 छीनो छपि मग मीन की, कही कही की रीति ।
 नामहि मे 'न' नाहिती, कर 'नन' का नीति ॥

रसनिधि क साप 'ननों' न 'न-नय' (-पाय) नहीं किया किसी से जा लग घोर उनसे मन की उसके हाथ बिना दाम लिए केव न्दिदा परन्तु 'उसके' रूप की बाठ धरि' उनसे कह गई, तब उन्होंने कहा—

जो कुछ उपजत आइ उर लो वे धाल दति ।
रसनिधि आँख' नाम इन, पायो अरथ समेति ॥

'आँख' हृदय की बात कह सकती हैं पर रूप रस को चानने वाले तो चल
हा हैं —

श्रीर रसन ल जानहो, रसना हूँ अभिराम ।
चाखत जे इक रूप रस, तातें हूँ चल' नाम ॥

अथ इन्द्रियो का तरह किसी व्यापार में समस्त रूप से योग देने की आवश्यकता
'नो' को नहीं है, यथा अपने अन्न भाग से ही बड़े बड़े कार्यों को कर देते हैं—

सिध विरचि सुरपति सध, आपहु देखे जेन ।
ते मनमोहन वति किए राधा आधे जन ॥

राधा तो यहाँ प्रतीक है । किन्तु सारे जग को बना में करने की सामर्थ्य तो
प्रत्येक नायिका के आधे हों में है —

जग बस कीनों आपुने, आधी चितवनि वाम ।
जो हग पूरे खोलती, कहा करति तो काम ॥

इन 'हगों' का तो आधा खुलना ही भना है । पूरे खुलने का परिणाम कवि की
कल्पना से भी बाहर है । किन्तु य अथ मू दो आख मूँदो (छिपी) प्रीति को प्रकट कर
देती है —

नव न दा के रूप पर, रीझ रही रिझ वारी ।
अथ मूँदो मँलियन दर्ई, मूँदो प्रीति उषारि ॥

उहाँ आँखों जस दो दो दोषक प्रकाश कर रहे हैं वहा अन्दर को प्रीति प्रकट
हुए बिना कैसे रह सकती है —

एक दोष सों गेह की प्रकट सध निधि होइ ।
मन मे नेह वहाँ बुर नह हग दोषक दोई ॥

प्रेम के प्रकट होते ही आँख ही आखा में दूर सडे सडे ही बातें और मनोविनोद
होने लगा —

दूरयो खडे सनीप को लेत मान मन मोव ।
हाते बुहुन क ह्यनु ही बतरत हास विनोद ॥

किन्तु लागी का यह नयनों का मिलना पसन्द नहीं । ज्योंही य हृग उलझे, त्यों ही कीटुमित्रक क्लेश और दुःखनों (रकीबा) क हृदय में गाठ पड़ गई । पर नायिका विवश है । नैनो को बहून समझाया । अपयश होन का डर भी दिखाया पर सब ध्यस्य हुआ —

नन मिले जे ना रहे, ना अपजस हि डराये ।
घोतन भावत देखिक, मिलत झगाऊ जाय ॥

मिलने का तो आगे आगे बटकर जा मिले पर, नह म घटक भर रूप म जा फोसे और अब इनकी यद् दगा है जस काई दुवली गाय कीचड में जा फोसे और निबन न मके —

नना घटके नेह सों पडे रूप म जाय ।
बहुले पार निरुसं नहीं मनो दूबरी गाय ॥

जहाँ इस प्रकार रूप माधुरी म परस्पर नन' उलझ गये हो वहाँ नायिका का सलियो के मित्राव मानकर बठना भी स्वाभाविक है । मानिनी को मनान नायक की दृष्टी भाई उसने बहून समझाया, माताया । अन्त में पाव पकड़ कर मान छोडने की प्रार्थना भी की किन्तु इसन मान नहीं छोडा । इतना मान करने वाली मानिनी शण भर में मान छोडकर प्रिय से हुन हृग कर मिल रही है यह प्रिय की तिरछी चितवन का कपाज है—

जितो जियो पाइन परी, तब तो बोली नाहि ।
अब तो पियगो हसि मिनी, तिरछी चितवन माहि ॥

सयाग के पञ्चात् वियोग की बारी भाई । नायिका की भूय प्यास, सब प्रकार के सुख चन समाप्त हो गये । नयन ऊठ बाहु हा गये (सुन के खुले रह गये)—

सात पिया के बिपुरते बिपुर गये सब धन ।
भूख, प्यास, भीदी गई उठबाहु भये नन ॥

दिन रात प्रिय की बाट दग्ने लग नयन ? पर इशमें किसी दूसरे का दोष छोटे

हो है यह प्रेम की भाग किसी अय की मुलगाई हुई थोड़ ही है —
 नना बड़ी बलाय है पर मुख लाग थाय ।
 प्राग विरानी साहक तन मे देत सागाय ॥

अपने हाथो लगाई हुई विरह की पराई प्राग आहो की गरम हवा से बढ़क
 अवश्य ही इस कोमल तन को जलाकर भस्मसात् कर देती किन्तु ये भ्राँसू इसे बं
 सेते हैं —

विरह अगनि तन तूल सम, आहि अवात्र समीर ।
 भसम होत राख भले, नैना ही के नीर ॥

ननों स दिन रात नीर बरसने लगा । 'भय भरभरी नन । घाँसुधो का घत
 नहीं' टूटी नाव म आने वाला पानी कही उलोचन स घटता है ?

ज्यों ज्यों नन उसीबिध करि पलकन की मीर ।
 त्यों त्यों टूटी नाव ज्यों भरि भरि आघत नीर ॥

प्रिय का बिछुडना एसा ही होता है नायिका क नन भ्राँसू बया बहा रहे हैं मारों
 विरह के पुष्पकाल में पलक रूपी अञ्जलि में भ्राँसूको का जल घोर बरीनियो की डाम
 लेकर काम रूपी ब्राह्मण के तत्वावधान म नीद न लेने का सवत्प कर रहे हैं—

पाणि पलक कुस बरनिका जल भ्राँसू द्विज मन ।
 पिय बिछुरत मनु नीर की लेत सकलव नन ॥

विरह मे इस प्रकार रोने वाल नयन जब समाग म बाण की तरह चलकर
 जैसे भी लग वह कह उठा—

दगुन लगत वेधत हिर्षहि विकल करत घोग घान ।
 ए तेरे सबतें विषम, ईदुन तोद्यन बान ॥

सब प्रकार क बाणा म विषम घोर तीक्ष्ण नयन बाणो का असगत प्रभाव
 देखिये— नग तो भ्राँसूों म बीध डाना हृदय का घोर सब अगों को व्याकुल कर डाला ।
 प्रत्यक गिकारी अपने गिकार पर बाण चलाकर उस गिकार को दू डने जाता है पर इन

नयन बाणों की यह विनोयता है कि इनसे बिधा हुआ शिकार स्वयं शिकारी के पाम सिखा
बना जाता है—

बान बेघि सब घिये को खोज करति हैं जाइ ।
अद्भुत बान कटाव्य जिहि, बिघ्यी लगै सग घाई ॥

इन नैन बाण से बिघे हुए घायल की चिकिरसा भी बताई गई है—
नैन बाण जाकी लगै कहियो प्रीयघ काहि ।
बुध-कठोर, पटिया भुषा, अघर पान पय ताहि ॥

नन बाण से घायल के लिए स्तनों का सेक करे, लम्बी लम्बी बाँहों की पट्टी
बाँधें और अघर पान का पथ्य दें ।
इसी नयन बाण के बल ही ता कामदेव जगद्विजयी हो रहा है उसका तथा
कामिन कुलों के बाणों में काम घोड़े ही चलता है—

बिय भरोसी नन की नागर मेरे जान ।
ना तब क्यों जुग जीतती काम फूल के बान ॥

य जगद्विजयी नयन कमी बाण सहन तीखे होन है तो कमी कमल से कामल
भी होते हैं—
घन देखें मुद्रित रहें देखे तैं अति घन ।
अगत मित्र हैं रावरे अलग हमारे नन ॥

सूय के समान प्रिय के नेत्रों को देखकर ये विन जाते हैं और उन्ह न देखकर
मुहुनित हो जाते हैं ।
ये कमल, केवल दिवा विवासी रत्न कमल हो नहा हैं राति विवासी इन्दीवर
की सोभा भी इनमें देखने को मिली है—

फूल जु फूल देखि ससि, सो इन्दीवर नैन ।
बहुत बान मूल चख तैं, ना बिछुर बिन रन ॥

सामान्य इन्दीवर से इनकी यह विनोयता है कि ये मूल चख में कभी बिसल
होने ही नहीं ।

नयनों को मृग की उपमा प्रायः दी जाती है और नागरिक लोग मृगों का शिकार किया करते हैं पर ये नयन मृग तो बड़े विचित्र हैं जो उलटा नागरिकों का शिकार करते हैं और यह शिकार खेलना इन्हें कामदेव ने सिखाया है—

खेलन सिखिये प्रति भल चतुर अहेरी मार ।

कानन घासो नन मृग, नागर नरनु सिवार ॥

कमल, मृग, बाण आदि की तरह ही मछली भी नेत्रों का उपमान रही है। चञ्चल नयनों की भीने पट के धूँघट में चमकते हुए देखकर गगाजल में उछलते हुए मछली के त्रोटों का स्मरण हो आता है—

चमचमात चञ्चल नयन, द्विच धूँघट पट भ्रोन ।

मानहु मुर सरिता विमल, जल उछलत जुग भोन ॥

इसी प्रकार भीने अचल की ओट में झुकते हुए नन एक कवि को जल में से छूटकर उठने को याकूल हुए खजन का जोड़ा दीख पड़ा—

घाली अचल ओट तें झलकि झलकि दृग जात ।

मानहु खजन, जालतें उडिबें को अकुलात ।

जगल के पशु (मृग), पक्षी खजन, जलचरा में मीन आदि उपमान निपुण रसिकों के लिए आनन्ददायक होंगे। ऐसा ही सोचकर गहरी—पाननू पशु—घोड़े, हाथी आदि को भी आँखों के रूप में प्रस्तुत किया गया— जिस तरह कुछ अडिगल घोड़े होते हैं उसी तरह ये दृग तुरग आदि लगाम न मानकर मूहजोरी कर रहे हैं—

मानत लाज लगाम नहि नक्ष न गहत भरोर ।

होत तोहि लख बाल क, दृग तुरग मूह जोर ॥

जरा इन अरबी घोड़ों को भाँ देखिये जो नई नई चालों से आहूँकों (चाहनेवालों) का मन राजी कर रहे हैं—

ताजी ताजी गतिन ए, तप तें सीखे लन ।

गाहक मन राजी कर बाजी तेरे मन ॥

संभलिये, घोड़ों के बाद ये मदभक्त गजराज की तरह प्रिय के नन प्रेम बाजार में छूट गये हैं यदि इनसे बचना है तो अपने नन रूपी दुस्मानों के पलक रूपी विचाड़ बंद

करके बँठ जायो—

छूटे हग गज भीत के, बिष यह प्रेम बजार ।
दोत्री नन दुकान के महकम पलक बिचार ॥
घोटे श्रीर हाथी सेना के अग है श्रीर वीरों के बिना सना कमी ?
पोंडवत टरत न सुभट लों रोकि सक कोड नाहि ।
लासन ही की भीर में घाँस उहीं चलि जाहि ॥

वीर जिन प्रकार लासों का भीड की चीर कर अपने लज्ज से जा टारना है,
किसी से क्वता नही उमी प्रकार य नम भी अपने प्रिय के पास पहुँच जात हैं ।

नना प्यासे रूप के, राखे रहे न छोड ।
चतुर सुर या बपों सबै कर भीर में छोड ॥

एक माधुरी के प्यासे कोई छोड न रहन हैं इन्ह कितनी ही मीम दो पर ये
लालची ऐसे हैं कि नहा भी रूप देखते हैं वही भीम मागने लगत ह—

नन हमारे लालची बपों हि लगऊ सीख ।
जह जह देखत रूप कों, तह तह मागत भीख ॥

हमी लोभ लालच न वग मे इन्होंने व्यापार भी प्रारम्भ किया । भीहों की
ठाढी, तिलक का काटा, भाग के दलने व पुतलियों के बाट वाली तराजू लेकर प्रेम नगर
के बाजार में प्रिय की मूरत तोलने लग ।

भुँट बाँडी बाँटी तिलक, सय पल पुतरी बाट ।
तोसत मूरत मिश्र था, नेह नगर की हाट ॥

लेकिन माह्वार बहान बाने य नन ऐसे नियालिया निकले कि मन (मन भर
बजन या मन) लेकर पाव (पाव भर या पाव) भी नहीं देता—

साहू बहावन फिरत है वित सरमाए साव ।
तेरे मन नियालिया मन ल देति न पाव ॥

एक बार इन कबाडियों ने मन की गिरवी रखकर फिर मन उपार न किया पर
उमने पश्चान् प्रेम लगी भाज जाना वग गया कि गिरवी घर नून मन का छूटना मुकिन
हो रहा है—

नना मन गहन घर्यौ, लह्यौ रूप रस लीन ।
भाव भ्याज चारिधि बद्धौ छुटिवो कवन प्रवीन ॥

इन बहुरूपियों का क्या ? भ्राज सेठ बन गये हैं तो कन पलकों की जटा और भजन की भस्म लगाई और बाबाजी बनकर रूप की भिक्षा माग्न निकल पड़े—

दृग-जोगी पलेकें-बटा ह्यार्द-भसम लगाई ।
रूप भीष के सालची जित देखें तित जाइ ॥

और भिक्षा न मिलन पर ननों ने पलक रूपी वस्त्र, दर्शन रूपी भोजन, भास रूपी धन और निद्रा भादि सुखो को त्याग दिया और दिगम्बर होगय—

पलक वसन दरसन भसन, जल-वित निस सुख घन ।
ए तत्रि सु-दरि श्याम विनु भये दिगम्बर नन ॥

इस प्रकार का त्याग करने वाले भी चोरी-डाका कर लेते हैं पर वह चोरी चित की होती है—

बिस-विद्यु वचतु न हरत हृठि लालन दृग वर जोर ।
सावधान के बटपरा ए जागति के चोर ॥

इसके अतिरिक्त चोरी की विशेषता यह कि शरीर, धन, भूषण आदि सब छोड़ गये, केवल मन निकाल कर ले गये—

कहौ कहा या चोर की चोरी सब लें घाडि ।
तन भुपन सब छाडि क, लीनो मनही वाडि ॥

इन प्यारे ननों के विषय में कितना कहा जाय ? इनका वणन अनन्त है— ये क्षण मे शाह हैं तो क्षण में चोर । क्षण मे शत्रु हैं तो क्षण मे मित्र—

प्यारे नननि की कषन कसे कहौ कवित ।
खिनक साट खिन चोरटा खिन घरी खिन मित ॥

इस प्रकार अनेक भाषों को अभिव्यक्त करने वाले इन दोहों का समुचित विषय में विभाजन करना भी नितांत आवश्यक समझकर कुछ मधुन वर्गीकरण किया गया है ।

इस सग्रह में बहुत से दोहे ऐसे हैं जिनमें स्पष्टतया एक ही भाव या एक ही विषय वस्तु का वणन अभिप्रेत है या विनिष्ट दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण है— उनको

तद्विषयक शोधन के अन्तगत ले लिया गया है। इनके अतिरिक्त कुछ दोहे ऐसे हैं—
जिनमें एक प्रमुख प्रकार का वर्ण विषय होने पर भी वे अन्य विषय में भी पृथक सत्ता
रखते हैं क्योंकि मात्र एक ऐसी इन्द्रिय है जो विभिन्न रसों का स्थान है और एक साथ
दो विरुद्ध क्रिया व परिणाम कर सकती है। भयवा कई दोहों में तीन-तीन चार चार
वस्तुओं या भावों का वर्णन मिलता है। जहाँ कवि ने विभिन्न भावों या वस्तुओं को एक
हाथ के कनेवर में सन्निविष्ट करने की चतुरी दिवलाई है, या कवि को वहाँ कोई
सागो-पाग मूर्ति उपस्थित करनी अभिप्रेत होगी— ऐसे दोहों का वर्गीकरण में महती
कठिनाई थी। इन प्रकार की परिस्थिति में हमने उन दोहों का 'नयना व नाना भाव'
शोधन में स्थान देकर सन्तोष करने की चप्टा की है। इस वर्ग में अनेक नायिकाभेदों
के विभिन्न हाव भावों के अनेक अलंकार व चमत्कारपूर्ण उक्तियों का दोहों का समावेश
हुमा है।

यद्यपि विभिन्न रसों व अलंकारों के नायिकाभेदों के एव हावों व भावों के
अलग अलग शोधन स्थापित किए जा सकते थे परन्तु बंसा करना किसी लक्षण प्रय में
ही उपयुक्त है न कि इन प्रकार के संकलन में। अतएव हमने इस संग्रह में स्थूल वर्गीकरण
का ही सुविधानुसार आशय लिया है।

इस संग्रह में जिन प्रसिद्ध एव अप्रसिद्ध कवियों के दोहों का चयन हुमा है उनमें
कुछ प्रमुख य हैं—

- (१) बिहारी (२) मतिराम (३) रसनील (४) रसनिधि (५) समन (६) जमला
(७) जमान (८) तुलसी (९) तुरमी (१०) नागरीदान (११) गुमान (१२) नरिद
(१३) दयाल (१४) कवीर (१५) प्रवीण (१६) वृन्द (१७) मुबारक (१८) मल
(१९) वाजिद (२०) पृथ्वीराज (२१) महमद (२२) रहीम (२३) हृषिक (२४) जगन
(२५) बरण (२६) जान (२७) केसव (२८) सबन।

इनके अतिरिक्त कवियों का दाह भी इस संग्रह को शोभा बढ़ा रहे हैं अतः उन
सब शत व अशत कवियों का प्रति कृतज्ञता-पापनाय उनका ध्यान स्मरण करते हुए हम
सबके प्रति धामार प्रकट करते हैं।

यद्यपि इस संकलन में विभिन्न रसों से सामग्री का चयन किया गया है

अथ

रूपी

की

छोड़

दण

विभा

पिदय

असिय

हलाहल

सदभरे

भक्त नयन

१

ब्रह्म निगुण सुरपति सगुण, सेसहु देखे जे न ।
ते मन-मोहन बसि किये, राधा आधे नैन ॥

२

सिव बिरचि सुरपति सर्व, सेसहु देखे जे न ।
ते मन-मोहन बसि किये, राधा आधे नैन ॥

३

तीन पेंड जाके अहो, त्रिभुवन मे न समाहि ।
धनि राधे राखति तिन्हें, लोयन कोयन मांहि ॥

४

तुम गिरि लैनख पें धर्यो, हम तुमको दृग कोर ।
इन द्वं में तुम ही कही, अधिक कियो को जोर ?

५

घट बढ इन मे कौन है, तुही साविरे ऐन ।
तुम गिरि लैनख पें धर्यो, इन गिरधर ल नैन ॥

६

दरसन ही को भूख है, होत न कबहुँ मेट ।
कैसे नैन अघाइहैं ? जाके जीभ न पेट ॥

जिस गुणातीन ब्रह्म को सगुण रूप में समस्त देवों का प्रभु कहा जाता है, जिस का अन्त, सदृशफणों वाला जेप नाग भी न पा सका उसी मन मोहन को राधा ने अधोभीलित नयन से ही बश में कर लिया । १

भगवान शंकर (तीन नेत्र) ब्रह्मा (आठ नेत्र) विष्णु या इंद्र (सदृशाल) और शेष नाग (दो हजार नेत्र) ने भी जिन्हें भली प्रकार नहीं देखा, ठही मन मोहन को राधिका ने आधे नयन से बश में कर लिया । २

जिस के तीन पैँड तीनों लाका में नहीं समाते हैं उसे तुम अपने नेत्रों की पुतली में रग रही हो, हे राधिके, तुम धन्य हो ! ३

तुमने तो गोवर्धन पर्वत का नख पर धारण किया है पर मैंने तुमको आँस की कोर पर ही उठा रक्खा है। अब तुम्हीं बताओ, हम दोनों में किमने अधिक महत्व का कार्य किया है ? ४

हे स्वाम, तुम्हो बताओ कि तुममें और इन गोपियों में कौन बड़ा है ? तुमने तो नख पर केवल गिरि उठा रक्खा है और इन गोपिकाओं ने गिरधर (गिरिराज पर्वत सहित तुम्हें) अपनी आर्गा म धारण कर रक्खा है । ५

इन नयनों का दर्शन की भूख लगी ही रहनी है जो कभी नहीं मिटती । भला, जिन नयनों के न जाम है न पत्र, वे कैसे तुम होंगे ? ६

७

भृकुटी-मटकनि, पीतपट,-चटक, लटकती-चाल ।
चल-चख-चितवनि, चोरि चितु, लियौ विहारीलाल ॥

८

रूप-धार घनस्याम की, छवि-तरंग की भोक ।
प्रेम-प्यास भाजे नहीं, नैननि नान्ही ओक ॥

९

स्याम वरन नैननि लियो, काहेतें कविराज ?
ता दिन तें तनमै भये, देखे दृग ब्रज-राज ॥

१०

अटपटि वात जु पेम की, कहिन परत इह बँन ।
चरण धरत जहँ लाडली, लाल धरत तहँ नैन ॥

११

उद्धव, नैननि जो करी, बैरी हू न करायें ।
उरभे मोहन-बेल सो, सुरभाये नहि जायें ॥

१२

वनक हि निरखे है सखी, मोहन भोरे-भोर ।
नैन छत्रोले छोर की, छिदी करेजे कोर ॥

पीताम्बर की चटक, भाई की मटक तथा गति की लटक से एव चंचल नेत्रों की बौका चित्तवा से विहारा लाल ने मेरे चित्त का सुरा लिया है । ७

घनस्याम की रूप धारा में शोभा रूपी तरंगों की पल लग रही है और नयनों की शोक छाटी होने के कारण प्रेम की प्यास ठीक तरह से नहीं बुझ रही है । ८

हे कविराज ! इन नयनों का रंग स्याम कैसे हो गया ? (कवि ने कहा) जिस दिन सौंदर्य ब्रजराज कृष्ण का देखा उमी दिन से ये बाले हो गए (स्याममय हो गए) ९

प्रेम की श्रटपटी बातें वचनों से प्रकट नश होतीं (उन्हें नियात्मक रूप देना पड़ता है) नृपभानलली जहाँ चरण रखती हैं वहाँ गदलाल श्रापें बिछाते हैं । (राधा जहाँ जहाँ जाती है कृष्ण की श्रापें वहीं पहुँच जाती हैं) १०

हे उद्धव ! इन नेत्रों ने हमारे साथ जैसा व्यवहार किया है वैसा दुश्मन भी नहीं करेगे । ये मोहन रूपी लता बिताता में ऐसे डलभे हैं कि मुलभाने पर भी नहीं मुलभ रहते हैं । ११

श्राज सुन सुन माहा का वाक्प देखा तभा स ह्दबाल ह्दकरे की श्रापों की करारा कार कलेने में जुम गईं । १२

१३

दृग लोभी हरि रूपके, लाज छोड़ि ललचाहि ।
देखें सुख हूनों लहै, अन देखै अकुलाहि ॥

१४

अंतियां अटकीं स्याम सीं, उत गुरु-जन रिपु ओट ।
काके आगं सोलिये, मोहन दुख की मोट ॥

१५

मन-मोहन नैनानिकी मती न समुभयो जाय ।
दरसत हू तरसत रहै कमल-नैन के भाय ॥

१६

राधा, माघो वदन तन, फिरि फिरि चितवत जात ।
जैसे जे आगे चलै, पाछे कूँ फहरात ॥

१७

जगत जनायो जिहि सकलु, सो हरि जान्यो नाहि ।
ज्यो आंखिनु सब देखिये, आंखि न देखी जाहि ॥

१८

हरि देख्यो कहूँ राधिका, तपन-तनूजा-तीर ।
इह एकै अपराध ते, व्याकुल सब सरीर ॥

श्री हरि की रूप माधुरी के लामोये नयन लज्जा त्याग कर ललचा रहे हैं। प्रभु को निरख कर तो अत्यन्त सुखी होते हैं और उन्हें बिना देखे व्याकुल हो उठते हैं। १३

आपके साँवरे स्वरूप में (मेरी सखी की) आखें अटक गई हैं किन्तु उपर गुरुजनों का और शत्रुओं का व्यवधान है इसलिए हे मोहन । इस दुख को गठड़ी को वह किस के आगे खोले ? (नायिका आखें मूँदे ही रखती है) १४

हे मन मोहन ! मेरे इन नयनों का अभिप्राय मेरी समझ में नहीं आता । क्योंकि कमल के समान नेत्रों वाले स्वरूप को देखते हुए भी ये तगसते रहते हैं । १५

राधा अपने माग पर चलती हुई मुड़ मुड़ कर माघन के मुख को देख रही है जैसे इसकी आँखें बनती हुई ध्वजा व समान हैं जो चलती तो आगे की ओर है और फहराती पाछे की ओर है । १६

तैने जिसके द्वारा सारे जगत को जाना, उस (विमय परमात्मा) हरि को नहीं जाना। जैसे आँखा से सब कुछ देखा जाता है पर आँखें स्वयं नहीं देखी जाती । १७

एक दिन राधा रानी ने यमुना के तट पर कहीं कृष्ण को देख लिया बस, वही एक अपराध से उसका सारा शरीर व्याकुल हो रहा है (कृष्ण का एक दृष्टि में राधा मोहित हो गई फिर सयोगाभाव जय व्यावसायिक है) १८

१६

हरि छवि-जल जवतें परे, तव तें छित्तु बिछुनें न ।
भरत ढरत वृडत तरत, रहट घरी ली नैन ॥

२०

“रवि बदी, कर जोरिकं”, सुने स्याम के वैन ।
भये हँसोहे सबन के, अति अनखीहे नैन ॥

२१

कहा लडैते हग करे, परे ताल बेहाल ।
कहुँ मुरली कहुँ पीत-पट्ट, कहुँ मुकट्ट वनमाल ॥

२२

सुन्दर सुखद सुसील अति, सखी सयाने सैन ।
बनक हि देखत ही वने, नट नागर के नैन ॥

२३

काजर दघो तो किर किरौ, सुरमी दिघी न जाइ ।
एक रमैया रमि रह्यौ, दूजौ कहां समाइ ॥

२४

नैनाना अतरि आंचरु, निसदिन निरखी तोहि ।
कब हरि दरसन देहुगे, सो दिन आयै मोहि ॥

जब से भगवान के छत्रि रूपी जन में मेरे नेत्र पड हैं तबसे एक पल भी उनसे अलग नहीं हाते हैं य रदट के जल पात्र की भाति भरते हैं, टलते हैं, और डूबते उतराते हैं । १६

‘अपने अपन हाथ जाड़ कर सूर्य को प्रणाम करो’ इस प्रकार के स्याम के वचन सुन कर गाणिकाआर्षा व खीरु हुए नयन भी, स्वभाजत हंसौ वाले हो गये । २०

तून इन नयना का लाइ म नतने क्या इतराये हैं कि जिससे लाल का चुरा हाल हा रहा है उनकी मुस्ता कहा, पाताम्बर कहीं, मुकुट कहीं, और वनमाला कहीं पड़ी है । २१

हे मखि ! मोहर एन मुग्य देने वाले व चतुर सकेत करने वाले मुशाल नटनागर के नत्रा व शभा देखते हा जाता है । २२

आँगा में यदि काजल लग डें तो किरकिरा मालूम पड़ता है और मुग्धा ता लगाना हा नहीं जाता कशकि इनमें एक हा रमेश रमण कर रहा है अब दूसरी वस्तु कहीं समायेगी ? २३

वह दिन कब आएगा ? हा हरि ! आप कब दशन दागे ? जिससे मैं उभे नयनों म रात दिन निरगला रहूँ । २४

२५

नैनां अतरि आव तू, ज्यूं हौं नैन भूषेउं ।
ना हौं देखौं और कूँ, ना तुभ देखन देऊँ ॥

२६

नैन हमारे जलि गये, छिन छिन लीडं तुभ ।
ना तू मिले न में खुसी, ऐसी वेदन मुभ ॥

२७

नैद-नैद न के रूप पर, रीभ रही रिभवारि ।
अघ मूँदी अखियन दई मूँदी प्रीति उघारि ॥

२८

भरो अमित छवि तो दृगन, सब जग बोलति साखि ।
मेरे हूँ नान्हे-मनहि, दृग-कोयन बिच राखि ॥



प्रमिय हलाहल मदमरे]

हे प्रिय, तुम नयनों में आश्रमे वैसे ही मैं आँसों में मूँद लूँगी, फिर न तो मैं किसी दूसरे को देखूँगी और न तुम्हें किसी को देखने दूँगी। २५

हमारे नया विरह में जल बुके हैं फिर भी क्षण क्षण में तुम्हारी लालसा रखते हैं किन्तु न तो तुम मिलो और न मुझे प्रसन्नता है। यह वेदना मुझे यों ही सताती रहेगी। २६

गन्दलाल के रूप पर रीझने वाली रात्रि रही है इस बात को श्रयावृत्ति की हुई प्रीति को इन श्रवण मूँदी आँसों ने प्रकट कर दिया। २७

सारा सारा साक्षी है कि तेरे लोचनों में श्रवार छवि मरी पड़ी है, तो इन नेत्रों की पुतलियों में मेरे भी छोटे से मन को स्थान दे दे। २८

नयनो की परिभाषा

२६

आपु लगति वेचति मनहिं, 'रसनिधि' कर विनु दाम ।
नैननि मे नै नाहिनें, यातें नैना नाम ॥

३०

छीनीं छवि मृग मोन की, कहौ कहां की रीति ।
नाम हि मे नै नाहि तौ, करै नैन का नोति ॥

३१

जो कछु उपजत आइ उर, सो वे आँखें देति ।
रस निधि आँखें नाम इन्ह, पापौ अरथ समेति ॥

३२

आँर रसन लै जान हौ रसना हू अभिराम ।
चाखत जे इक रूप रस तातें है 'चख' नाम ॥

लगालगी तो आप करते हैं और बिना दाम आदि लिए ही बिचारे मन को बेच देते हैं, इन नैनों में नै (नय=नीति, थाय) नहीं है न । इसीलिए इनका नाम 'नैन' है (नै+न) २६

जिन के नाम में ही नै नहीं है ता फिर नैन कौनसी नीति पर चल सकते हैं । कहिए, यह कहाँ का रात है कि इन्होंने मृगों और मद्गलियों की शोभा को चुरा लिया है । ३०

जा कुछ भी हृत्प्य में भाव उत्पन्न होता है उसे यह कह देती हैं, रसनिधि कहते हैं कि इसलिए दाका आँगों नाम मायक है (आम्प्या=कहना, आँगें=कहें) ३१

मधुर, अम्ल, कटु, कषाय, लघण, निक्त आदि रसों का स्वाद तो जिह्वा भी बता सकता है किन्तु 'रूपरस' का तापेवल मात्र नत्र हा 'सम्भ' सकते हैं इसीलिए इनका नाम 'सम्भ' है । ३२

नयनों की भाषा

३३

नैन फही मैना सुनी, उत्तर दीनी नैन ।
नैन नैन सौ मिलि रहै, कहै कौन सौ बैन ॥

३४

नन रसीले रसिक अति, नैनां नैन मिलन्त ।
अनजाने सो प्रीति गुन, पहिले नैन करन्त ॥

३५

जगन समझिक मन रहै, खवन जोभ रस बैन ।
बिछुवन-दुख-दिन दहत है, नीकै जानत नैन ॥

३६

जगन समुझि है मन खवन, रसना रस के बैन ।
लज्जा रूप सनेह कौं नीकै समुझत नैन ॥

३७

सुनत निहारत रूप गुन, केसव एक प्रमान ।
कबहुँ खवन ए लोयना, कबहु लोयना कान ॥

३८

भली बुरी पहिचानियै, खवन सुनत हो बैन ।
ज्यो मन मे की स्थामता, कहे देत है नैन ॥

नेत्रों की कही हुई बात (इशारा) नेत्रों ने सुनी और उत्तर भी उ-होंने दे दिया तत्पश्चात् दोनों के नयन परस्पर मिल गए। अब कौन किससे कौद् बात कहे ? ३३

रसीले नयन रसिक नयनों से शास्त्र ही जा मिलते हैं और आश्चर्य है कि अपरिचित व्यक्ति से भी प्रेम प्रारम्भ कर देते हैं। ३४

जगन कवि कहते हैं कि मन तो सम्झाने से सम्भ्र जाता है और कान प्रिय की बातें सुनकर व जीभ प्रिय की बातें बरके रह जाती है परन्तु विरह का दुःख किस प्रकार जलाता है, इसे नयन ही भली भाँति जानते हैं। ३५

जिह्वा के स्वाद को मन और प्रेमवाक्यों को ता कान भी सम्भ्र लेते हैं किन्तु जगन कहते हैं कि लज्जा की दशा में अत स्थित स्नेह का ता केवल नेत्र ही भली प्रकार सम्भ्र पाते हैं। ३६

प्रिय के रूप और गुण का देखने और सुनते हुए कभी तो यह कान नेत्र ही रहे है और कभी ये नेत्र कान ही रहे हैं। केशर कहते हैं ये एक साथ दाना कार्य करने को श्रावुर हैं। ३७

जैसे बाहरी मन्दाद् बुराई की पहचान कानों से बसा सुनकर की जाती है वैसे ही मन की कल्पिता का नयन बताने हैं। ३८

३६

नैन नैन की जानही, नैन नैन कौ हेत ।
नैन नैन के मिलत ही, नैन नैन कहि देत ॥

४०

भीतर के गुन श्रीगुना, श्रीवियाँ देन लसाइ ।
श्रीन देखते पाइये, जैसी जहि सुभाइ ॥

४१

सबल कहे वंठी सभा ध्यानी रहै न हेत ।
सैन-वैन मे परलिये, नैन ऐन कहिदेत ॥

४२

प्रीति प्रकट वा प्रीय की, ऐन नैन मे होति ।
जैसे पट फानूसकं दुरति न दीपक जोति ॥

४३

हंसत नहीं बोलत नहीं रस न जनावत सैन ।
रूप ही पहिचानिये, नेह चीकने नैन ॥

४४

कोरि जतन कीजं तऊ नागर-नेह दुरै न ।
कहे देत चित चीकनी नई रुपाई नैन ॥

भाँखें ही भाँखों को व्यथा पहचानती हैं और भाँखों का प्यार भी भाँखों से ही होता है। दो भाँखें परस्पर मिलते ही अपनी सारी बातें कह देती हैं। ३९

हृदय मन गुण भवगुणों को भाँखें स्पष्ट बतला देती हैं किमी के भी स्वभाव को भाँखों द्वारा जाना जा सकता है। ४०

सबल कहते हैं कि सभा में बैठो हुई नायिका का प्रेम छिपाने पर भी नहीं छिप रहा है। यदि देखना है तो इसारे रूपी मन्त्र की ओर ध्यान दीजिये, क्योंकि भाँखें हृदय के भावों को ज्यों का त्यों कह देती हैं। ४१

जसे फातूम क आयरण में दीपक की ली नहीं दिया मन्त्री वैसे ही उस प्रिय की प्रीति नयनों में प्रकट होती है। ४२

न तो हँसती है, न बोलती है, और न सनेतों से ही प्रेम प्रकट कर रही है कि तू इस रूपी नायिका के प्रेम को मनह से चीकने हुए नयनों द्वारा पहचाना जा सकता है। ४३

बरोटों उपाय कीजिए फिर भी नागर का प्रेम नहीं छिपता क्योंकि चीकने पिल की कपा नरीन (बनाकटी) ह्याई धारण की हुई भाँखें कह देती हैं। ४४

४५

तूँ जु दुरावति है सखी, मन मोहन की हेत ।
चितवनि में चित पाइय, आँखें साखें देत ॥

४६

जीभ कसौटी स्वाद की, स्रवन कसौटी बँन ।
बास कसौटी नासिका, रूप कसौटी नैन ॥

४७

मिलि उनसो मनसों मिले, दूत गान के कान ।
नैन रूप के दूत है, पूरन इहै प्रमान ॥

४८

भावतां अन भावतां, नैना ही कहि देत ।
एक हि देखे बल उठै, एकाहि बलि बलि लेत ॥

४९

तुरत सुरत कैसे दुरत, मुरत नैन जु रि नोठि ।
डोँडी दे गुन रावरे, कहै कनोठी दोठि ॥

५०

कर-धमनी कर टेक क, कहत भिषज गति-गात ।
योँ ही चतुर चितौनि में, चितत चित्त की घात ॥

हे सखि ! तू जो मन मोहन के प्रेम को छिपा रही है वह तेरी चितवन में स्पष्ट दिखाई दे रहा है । उसकी साधी भाँव दे रही है । ३५

जमे स्नाद के लिए जीम, उचनों के लिए बान, गध ब लिए नाक बसोटी है बस ही स्पकी बसोटी नयन है । ४६

जस गाने के दूत बान होने हैं वसे ही यह प्रमाणित है कि रूपक दूत नयन होते हैं जो पहल जनस मिलकर फिर मन से मिल जात हैं । ४७

प्रिय एक अप्रिय क विषय में नयन स्पष्ट कह दते हैं क्योंकि एक को देखा पर तो वे जल उठन हैं और एक का देखकर बनिहार होने लगते हैं । ४८

यद्यपि कठिनता से जुझन वाली दृष्टि भीम्र ही मुड जाती है फिर भी सुरत की सुरत कसे दिप सकती है नजर चुगने पर भी घ्रापकी अपराधी भाँवें धारके गुणों की, डिडोरा पीट कर कह रही हैं । ४९

जमे हाथ की नाडी पर हाथ रखकर धरिर की भित्ति बंध बतलाता है वसे ही बनुर भाति चितगत बात की एक चितवन में ही जान लेने हैं । ५०

५१

ज्यों जल सौंचत पेडतें, पातन प्रगटत आइ ।
जगन जीव को नेहरा, आंखिन ही भलकाइ ॥

५२

लाख लोग मे जानिए जाके हिरदं हेत ।
नेह नाह की कयो दुरं, नन दोउ कह देत ॥

५३

आये जोवन के सुनो, जो गति कीन्ही मन ।
तिया अग के भेद सब, कसवाती कहें नन ॥

५४

प्रेम दुराये ना दुरं, नना देहि बताय ।
छेरी के मुँह रो सखी, क्यों कर कुम्हडो माय ॥

५५

एक दीप सो गेह की, प्रगट सब निधि होइ ।
मन मे नेह कहाँ दुरं, जहें दृग दीपक दोइ ॥

५६

नना देत बताइ सब, हियकी हेत अहेत ।
ज्यों नाई की आरसी, भली बुरी कहि बेत ।

५१

ज्यों जल सौंचत पेढतें, पातन प्रगटत आइ ।
जगन जीव को नेहरा, आंखिन ही भलकाइ ॥

५२

लाख लोग मे जानिए जाके हिरदै हेत ।
नेह नाह को कयो दुरै, नैन दोउ कह देत ॥

५३

आये जीवन के सुनी, जो गति कीन्ही मैन ।
तिया अग के भेद सब, कसबाती कहै नैन ॥

५४

प्रेम दुराये ना दुरै, नैना देहि बताय ।
छेरी के मुँह री सखी, कयो कर कुम्हडो माय ॥

५५

एक दीप सो गेह की, प्रगट सब निधि होइ ।
मन मे नेह कहाँ दुरै, जहँ दृग दीपक दोइ ॥

५६

नैना देत बताइ सब, हियकी हेत अहेत ।
ज्यों नाई की आरसी, भली बुरी कहि देत ।

जगन कवि कहत हैं कि जस वृष मे सोचा हुआ जल पत्तों में प्रकट होकर
दीखता है वैसे ही हृदय का प्यार भावों में भुलक पडता है । ११

त्रिसक हृदय में प्रेम होता है वह ठा तासों नोनों में भी जात हो जाता है । प्रत
प्रिय का स्तह कस छुन जब कि दोनों नयन स्पष्ट कह दत हैं । १२

धोवन क धान पर वामनव न जा दगा की है वह सुना । नायिका के भय के
सार रहस्य का भावें कह रही हैं । १३

ह सति । जस बकरी क मुँह में कुम्हटा नहीं समा सकता उसी प्रकार प्रेम भी
दियाने से नहीं दिय सकता उस भावें प्रकट कर ही देती हैं । १४

जब एक दीपक से घर का सारा सजाना प्रकट होकर स्पष्ट निहाई देने लगता
है तो जहाँ नयन नपा दो दो दीपक हों वहाँ मन में दियाना हुआ प्रेम कस दिय रह
सकता है ? १५

हृदय गत प्रम या वर को य नयन वस ही स्पष्ट कर दते हैं जैसे नार्द की
भास्वी चहर की मसार्द बुराई को । १६

५७

नैना छवि की श्रारसी, करता गढी श्रतूप ।
 सकल अग का जान कहि, प्रगटत तामे रूप ॥

त्रिधाता ने यह ननों का मनोहर दपण बडा ही अनुपम बनाया है । जानकवि कहत हैं कि जिसमें सार अर्गों का रूप प्रकट हो जाता है । ५७



नयनों के नाना भाव

५८

नैन मिल तो कहा भयो, (जो) मनवा नहीं मिलत ।
अम्बर घटा जु ऊनमे, (तो) सरवर नाहि भरत ॥

५९

नैना मिल्या सु मन मिल्या, मन मे मिल्या सु मित्त ।
जिस गढ का भेद मिल्या, सो गढ लिया निचित्त ॥

६०

जमला बंछ्यौ चोतरै, नयण गये टसकाइ ।
अगूठी कर ही रही, गया नगीना हाइ ॥

६१

नैना केरी प्रीतडी, जे कर जाएं कोय ।
जो सुख नैरां नोपजै, ते सुख सेज न होय ॥

यदि मन नहीं मिला तो कबल आशों व मिलन से कोई लाभ नहीं । आकाश में
घनाशों के फिर धान मात्र से तालाब नहीं भरत । ५८

नयनों व मिलत ही उसका मन भी भा मिला धोर हमार मनका सच्चा मित्र
बन चुका है, अतः जिन किन का अंतरंग भेदिमा हम स मिल गया है उस गठ को तो
अब निश्चित प्राप्त किया ही समझो । ५९

सौन्दर्य को दख कर चौतर पर बैठ जमना के नयन वहाँ चले गये (धोर वह
यही का यही रहा) जैसे झँगुनी तो हाथ म ही रह गई हो और नगीना निकल कर गिर
पड़ा हो । ६०

काई नयनों स प्रेम करना हो तो जाने ? जो आनन्द नयनों से उत्पन्न हाना
है वह सुख सेत्र पर भी नहीं मिलता । ६१

६२

रस सिगार मजुन किये, क०नु भजनु देंन ।
अजनु रजनु हैं बिना, सजनु गजनु नन ॥

६३

नैन सलोने मोहिने, लागि न जानें छूटि ।
जैसे चाँटा की गहन, रहत सीस तें दूटि ॥

६४

लोचन नक अघात नहि, देखत प्रीतम लोग ।
ज्यो सुपनें पानी पिये, प्यास न बुझत असोग ॥

६५

सरल तरल तीखे कुटिल, अरुण असित सित नैन ।
वारों खजन, कमल, मृग, और मीन, कवि बैन ॥

६६

मृगज लजे राजन लजे, कज लजे छवि छीन ।
दृगनि देत दुख दीन ह्वै, मीन भये जल लीन ॥

६७

लोचन चारु चकोर सम, वातक कुमुद तरग ।
अजन जुत अलि काम सर, खजन मीन कुरग ॥

शृगार रसके हाव भाव, कटाक्ष आदि में निष्ठात ये नयन कमलो का मान भव करने वाले हैं और अजन लगाये बिना स्वाभाविक रंग से ही खजन पक्षी को तिरस्कृत करते हैं । ६२

जैसे चीटा अपने सिर से झूट जाने पर भी अपनी पकड को नहीं छोड़ता वैसे हा मोहित करने वाले सलोने नयन लग जाने के बाद छोड़ना नहीं जानते । ६३

प्रिय जन के दशन से ये नयन बसे ही नहीं मघाते जैसे स्वाभाविक व्यास स्वप्न में पानी पीने से नहीं बुझती । ६४

इन सीधे, चपल लोखे, डेढे, लाल, काले, और ज्वल नयनों पर खजन, कमल, मूष, मोन, और कवि वाणी को मैं बलिहार करता हूँ । ६५

तेरी आँखो को खकर हरिय, शावक एव खजन लज्जित हो गये और कमल भी घोमा हों हो गय । मछलियाँ भी दीन और दुखी हो जल म जा छिपी । ६६

मुद्गर नयन चकार, चातक, नीले कमल और तरंग के समान है और ये अजन पुक्त होने पर अमर, काम बाण, खजन, मछली और हरिय के समान है । ६७

६८

वारों बलि तो हृगनु पर, अलि लजन मृग मीन ।
 आधी दोठि चितौन जिहि, किये लाल आधीन ॥

६९

नलिन मलिन किय नागरी, तेरे लोचन लोल ।
 अरु चकोर चेरे किये, लिये समोले मोल ॥

७०

फहत सबै कवि कमल से, मो मत नैन पखानु ।
 नातरु फल इन बिय लगत, उपजतु विरह कृसानु ।

७१

भूठे जानि न सप्रहे मनु मुहँ निक्से बँन ।
 याही तँ मानहु किये, बातनु की विधि नँन ॥

७२

मोती पिय के कान मे, किहि विधि खरे कंपाहि ? ।
 तिरछी चितवनि तँ डरे मत्ति से ३ जाहि ॥

ए पलकं भइ बीजर

नैनन मे प्रीतम

हे सखि ! तेरी भाँसों पर मैं बलिहारी जाती हूँ और भ्रमर, खजन, हरिण, मछली इन सबको चारती हूँ । क्योंकि जिनकी भर्षों मीलित चितवन ने ही लाल को वग में कर लिया । ६८

हे नागरी ! तर चञ्चल नयना न कमला का मलिन कर दिया खजोरा को सेवक बना लिया और बिचारी बीर बहूटी को तो मोल ही ले लिया है । ६९

कवि तो सारे ही रह कमन व समान बताते हैं परन्तु मेरे मत में तो ये नयन पत्थर है यदि नहीं ? तो फिर इन त्रिनों के नयन म (ठकरान मे) विरह भग्नि क्यों पदा होती है ? ७०

मुँह से निकले हुए वचनों को भ्रमसत्य या उच्छिद्य समझ कर मन ने ग्रहण नहीं किया कसौलिया माँगों बिजाता न रेव वार्ता करने को नयना की रचना की है । ७१

श्रिय के कान में पड़ने हुए मोती क्या काँप रहें ? इसलिए कि नायिका की तिरछी-नीची चितवन ने डर रह है कि कहा हूँ फिर ता न वेये त्रायग । ७२

य पलकें पया मा बन कर इस प्रकार चाह से बारबार भपक रही हैं जैसे भाँसों में बसे हुए प्रीतम को पखा मन्ना जा रहा हो । ७३

७४

तन मेरो सेंवल रई, चकमक पियके नैन ।
पल भूपकत चिनके उठे, सिलगावत मनु सैन ॥

७५

नैन नदी श्री पुल तिलक, नेह नीर तिहें माहि ।
मन-गयद उत्तरत गिरचो, फिरि फिरि निकस्यो नाहि ॥

७६

प्रीत तुम्हारी पजरा, नैन तुम्हारे छेल ।
मन जु हमारे सिंह को, बाँधि लियो तुम गल ॥

७७

नैन महल बरनी सु चिक, पुतरी मसनद साज ।
तिल तकिया तामे सु मन, दे बैठो महाराज ॥

७८

मान सरोवर पेम जल, रूप सु लहरें लेत ।
नैन पियासे दरस को, धूँघट घाट न देत ॥

७९

भुहें गिलोल गोलक नयन, अजन तती जान ।
पल-किटका पथी मनह, भारत तिवरी तान ॥

प्रिय के नयन चक्रमक हैं अतः पलक भपकने ही चिनगारियाँ उठने लगती हैं और मानों कामधेय मेमन रुई जमे मेरे शरीर को सुलगा देता है । ७४

नयन रूपी नदी मे नह रूपी जल भरा हुआ है और तिलक रूपी पुल बंधा हुआ है इस नदी में मन रूपी हाथी ऐसा गिरा कि वापस नहीं निकता । ७५

ह छना ? तुम्हारी प्रीति पित्रडे क तुल्य है उसम हमारे मन रूपी सिंह का तुमने समे ही म नयना मे बाध लिण । ७६

नन रूपी महल म वरीनियो के चिक लटके हुए हैं और पुतलियो के गिरे बिछे हुए है उसम तिल का लकिया है, हे महाराज ! उसमे अपना मन लगानर बठ जासो । ७७

प्रेम जल भर मानके सरोवर म रूप की तरंगें उठ रही हैं और मेर नेत्र दर्शन के प्यासे हैं किन्तु धूँधट घाट नहीं दे रहा है (धूँधट के कारण मानवती के रूप सीन्ध का नयनों स पान नहीं किया जा सकता है ।) ७८

नेत्र क्या हैं, कोई मन पक्षी को मारने के लिए गुल्लक हैं । मोह रूपी गुल्लक में नयन रूपी गोनी है और कज्जल की रेखा ही नसी है शरारियो को तानना ही गुल्लक धुमाना है । एक पलक जहाँ कबच का काम करती हैं । ७९

८०

नैना प्रिय के नाग हैं, पलक पटारा मात ।
खोलत हियको डसिगये, चढी लहरि जिय जात ॥

८१

नागिन पुतरी नैन की, रही कौंठरी खाइ ।
बंरिन भूखी प्रान की, देखति ही डस जाइ ॥

८२

देखि परस्पर दम्पती, दृगनि मूर्खि रस लेत ।
मनहु एक की एक छवि, नैक न निफसन देत ॥

८३

रह्यो चकितु चहुँधा चितै, चितु मेरी मति भूलि ।
सूर उयै आए रही, दृगनु साँभ सी फूलि ॥

८४

प्रीत लगी अति पीय सों, बितु देखे कल नाहि ।
बे बे टक लागी रहै, चौक सोवन माहि ॥

८५

सगति दोष लगै सबै, कहै जु साँचे वैन ।
कुटिल बक भ्रू सग तें, भये कुटिल गति नैन ॥

प्रिय की आँखें क्या हैं मानों पालतू नाग हैं जो पलकों की पिटाही में रहते हैं ।
पलक पिटाही खोलते ही दृश्य को डम मये हैं और अब इस जीवमें जहर की लहर चढ़ी
जा रही है । ८०

मनों की पुनर्जी नागिन के समान बनय करके बँधी हुई है यह प्राणों की
भूमी बैरन देखने ही डम लेनी है । ८१

प्रेमी मुगल परम्पर एक बार देव कर आँखें भूँद कर आनन्द प्राप्त कर रहे हैं ।
माना एक दूसरे की रूप छवि का आँखों से जरा भी निकलने देना नहीं चाहत । ८२

सूर्योदय का समय आप घर आये हो, किन्तु आपकी आँखों में साझ सी पून रही
है इसलिए मेरा चित्त मति भ्रम में पड़ कर चागा और चकित होकर देख रहा है
(कि सूर्योदय बेला है या सूर्यास्त बेला ?) । ८३

प्रोतम से हतनी प्रीति होगई कि उह देवे बिना इन आँखों को चन नहीं है ये
टकटकी लगाय रहती हैं और सोत वस्त चौक पडती हैं । ८४

यह साथ है कि सफ़लता का प्रभाव सब पर पडता है अतएव टेढ़ी मोड़ो के सग
से ये नयन भी टेढ़ी धान वाले होगय हैं । ८५

८६

सब श्रोग करि राखी सुघर, नाइक नेह सिखाइ ।
रस जुत लेति अनत गति, पुतरो-पातुर-राइ ॥

८७

फूने फदकत लै फरी, पल, कटाच्छ-करवार ।
करत बचावत बिय नयन, पाइक-घाइ हजार ॥

८८

परी बाल पुल-चन्व मे, विरह-राह की छाँह ।
कै हग-दान छुडाइये, सुकृत हेतु करि नाह ॥

८९

असिस देत द्वारे खरी, दान लेत धर सीस ।
मो से महा गरीब को, चितवन ही बकसीस ॥

९०

ढरे ढारले हीं ढरत, दूजे ढार ढरैन ।
बयो हू आनन आन लों, नैना लागत नैन ॥

९१

चितवत जितवत हित हिये, किये तिरौछे नन ।
भोज तन दोऊ कपे बयो हू जप निवरै न ॥

नेह नायक के द्वारा सिललाकर सर्वाङ्ग सुपर कर रखी गई श्रीलों की पुतली पानुर अनेक प्रकार की रस भरी गतें (गतिर्या) लेती है (सिद्धित नर्तकी की तरह कई ह्राव भाव दिखलाता है) । ८६

फूले हुए नायक नायिका के नयन रूपी पदल सिपाही पलक रूपी लाल और कटाक्ष रूपी खड्ग लेकर फुदक फुदक कर हजारों प्रकार के घात प्रतिघात करते हैं और बचाते हैं । ८७

बाला के मुख चद्र पर विरह राहु की छाया पड गई है अत धर्म के लिए नयनों का दान देकर उसे विरह राहु से छुटाइये । ८८

हे नायिका ! मैं द्वार पर खडा हुआ आगीवादि दे रहा हूँ और तुम्हारा दिया हुआ दान शिर भुकाकर लूँगा । मेरे जैसे महा गरीब के लिए तुम्हारी एक तिरछी चितवन ही बहुत बडा दान होगी । ८९

जिस द्वार पर मेरे नयन ढन गये हैं उसी पर ढनते हैं दूसरी द्वार पर नहीं ढलते । किसी प्रकार भी अय आनन से भुक्कर नहीं लगते (जिस पर रीझ गये हैं वहीं रीझते हैं अयत्र नहीं) । ९०

तिरछे नयनो से देखते हुए और एक दूसरे के प्रति हृदय मे प्रेम ब्रताने हुए दोनों भीग हुए बाँप रहे है पर दोनों का जप समाप्त नहीं हो रहा है । ९१

८६

सब श्रंग करि राखी सुघर, नाइक नेह सिखाइ ।
रस जुत लेति अनत गति, पुतरी-पातुर-राइ ॥

८७

फूने फदकत लै फरी, पल, कटाच्छ-करवार ।
करत बचावत बिय नयन, पाइक-घाइ हजार ॥

८८

परी बाल मुख-ब-द मे, विरह-राह को छाँह ।
कै हग-दान छुडाइयै, सुकृत हेतु करि नाह ॥

८९

असिस देत द्वारे खरी, दान लेत धर सीस ।
मो से महा गरीब को, चितवन ही बकसीस ॥

९०

ढरे ढारते हों ढरत, दूजें ढार ढरैन ।
कयो हू आनन आन लों, तेना लागत नैन ॥

९१

चितवत जितवत हित हिये, किये तिरौछे नन ।
भोजे तन दोऊ कपे कयो हूँ जप निवरै न ॥

नेह नायक के द्वारा सिखलाकर सर्वान्न सुधर कर रखी गई आँखों की पुतली पातुर अनेक प्रकार की रस भरी गठें (गठियाँ) लेती है (निश्चित ननकी की तरह कई हाव भाव दिखलाती है) । ८६

फूले हुए नायक नायिका के नयन रूपी पदल सिपाही पत्रक रूपी तान और कटाक्ष रूपी खड्ग लेकर पुदक पुत्रक कर हजारों प्रकार के घात प्रतिघात करते हैं और बचाते हैं । ८७

बाला के मुख चद्र पर विरह राहू की छाया पड गई है अन धर्म के विना नयनों का दान देकर उसे विरह राहू से छुडाइये । ८८

हे नायिका ! मैं द्वार पर खडा हुआ आगीवादिद रहा हूँ और तुम्हारा दिया हुआ देान शिर भुवाकर लूंगा । मर जैसे महा गरीम के लिए तुम्हारी एव तिरछी चितवन ही बहुत बडा दान होगी । ८९

जिस द्वार पर मरे नयन टन गये हैं उसी पर टनने हैं दूसरी द्वार पर नहीं टनते । बिना प्रवार भी आय धानन से भुक्कर नहीं नयने (जिस पर रीऊ गये हैं वही रीभते हैं आयन नहीं) । ९०

तिरछे नयना से देखते हुए और एक दूसरे के प्रति हृद्य में प्रेम राने हुए दोनों भीगे हुए काँप रहे हैं पर दोनों का जब सपास नहीं हो रहा है । ९१

६२

सजनी सब जग छोड मन, खगत कान्ह पे धाइ ।
ज्यों तमु तजि गति नैन की, लगत उजारे जाइ ॥

६३

तपति बुझी तन कामकी, भयौ सकल सुख चैन ।
प्रीति बढी कबि मल कहै, मिले नैन सो नैन ॥

६४

देखत रूपहि थकित ह्वं, करी बसीठी नैन ।
दुहन नेटु मिलि बढि चलयो, सम अतुराई नैन ॥

६५

नैन लगे तिहि लगति जु न छुटे छुटै हू प्रान ।
काम न आवत एक हूँ, तेरे संक सयान ॥

६६

ऐचति सो चितवनि चितै, भई ओट अलसाई ।
फिरि उभकन कौं मृगनयनि, दृगनि तगनिया लाइ ॥

६७

अनिपारे भारे अरुन, कजरारे कल वाम ।
वा चख चाहनि चाहकी, मो चख सदा सकाम ॥

हे सखि ! मेरा मन सारे सपार को छाडकर सीधा दौडकर क हैया पर ही टिकता है, जैसे समस्त अधकार को छोडकर ये अखिं प्रकाश पर जा ठहरती है । ६२

कवि मल कहते हैं कि अग्नि से आखें बया मिलीं वियोग के कारण शरीर को जलाने वाली उष्णता शीतल होगई, और सारे सुख प्राप्त होगय एव अनुराग बढ गया । ६३

सौन्दर्य को देखते देखते अखिं अपलक (स्थिर) होगई और फिर उन्होंने शीत्य-कर्म (स्कंठ आदि) शुरू कर दिया । दोनों की चतुरतावश दोनों का स्नेह मिलकर बढने लगा । ६४

उसकी लगन में लगे हुए ये नयन प्राण छूटने पर भी नहीं छूट सकते । तेरी सक्डो सयानी बातों में से एक बात भी काम नहीं आरही है । ६५

वह मृगनयनी मुझे आकषक चितवन से देखती हुई, मेरे नयनों में "एक बार चापद फिर वह उभककर देखेगा" इस प्रकार की अभिलाषा लगाकर अलसाकर भाड से छिप गई । ६६

नायिका के तीखे तथा अलसाय हुए लाल एव नाजल वाले मुग्दर बाँके उन नयनों में चाह है या नहीं, पर मेरे नयन तो सदा कामना वाल हैं । ६७

६८

अनियारे भारे मदन, लाज भरे सुख संन ।
काहू घरी न छिन पलक, हिय तें टर न नैन ॥

६९

अमिल रहें नहि पल मिले, देत न आवें मैन ।
चित्र मिटे मति मित्र की, रहें रूप भरि नैन ॥

१००

तनिक किर किरि जो परें, कर मीडत जिय जाय ।
देखौ अचरिज पेम की मूरति नैन समाय ॥

१०१

बडौ मद अरविद-सुत, जिहिन पेम पहिचान ।
पिय-मुख देखत दृगन कौं, पलक रची विधि आन ॥

१०२

रही अचल सी ह्वै मनो, लिखी चित्र की आहि ।
तजै लाज, डर लोक कौं, कहाँ विलोकति काहि ॥

१०३

अरुभे दृग सरुभे नहीं, नहीं रहत गहि चैन ।
बहुतें कर देख्यो अलो, मो ढिग पिय आवें न ॥

तीखी घनीवाले, काम के कारण भारी, कि तुलाज से भरे मुख के स्थान के नेत्र,
किसी घड़ी में पल भर को भी हृदय से नहीं टलते हैं । ६८

य भाँखें मित्र के रूप से (ऊपर तक) भरी हुई हैं अतः पलक नहीं लगते हैं और
न इगारा हो कर पाती हैं क्योंकि कहीं मित्र का चित्र न मिट जाय ? ६९

भाँख में जरा सा रज कण पड़ने से ही बड़ा कष्ट होता है और हाथ से
मसलते मगलते हैरान हो जाते हैं । पर तु प्रेम का आश्चय तो देखो कि प्रिय की मूर्त,
भाँखों में देखटके समा जाती है । १००

विधाता भी बड़ा मद-बुद्धि निकला, जिस प्रेम की कोई पहचान नहीं । प्रिय
मुख को निहारने वाली भाँखों में जिसने पलक बनाई । १०१

वह देखो, जठ पदार्थ तो हो रही है मानों चित्र में लिखी मूर्ति हो । लज्जा और
लोक भय को छोड़कर (वह यदि तुम्हें नहीं देखती है ता) फिर वह कहीं और किसको
देख रही है ? १०२

हे सखि ! सारे उपाय करके मैंने देख लिए परन्तु प्रिय मेरे पास नहीं आये
(अतः मैं तो पलक ब्रूठ गई) किन्तु य उलझ हुए अयन सुनक नहीं रह हैं इसीलिए ये
चन से नहीं बँटते । १०३

१०४

देखत कछु कीतिग इतै, देखौ नेकु निहारि ।
कब की इक टक डटि रही, टटिया अँगुरिन फारि ॥

१०५

साची प्रीति लखी दृगनि, सरवर कं इक चित्त ।
दूक दूक छाती भई, विछुरे पानिप मित्त ॥

१०६

जे नैना न सुहावई, ते नित रहे हुजूरि ।
जे इन नैननि मे वसे, ते इन नैनन दूरि ॥

१०७

तलपि सेज सकलप किय, तलफति राति विहाति ।
पलक न पल सो पल लगै, अलप कलप सम जाति ॥

१०८

जग बस कीनो आपुने, आधी चितवनि वाम ।
जो दृग पूरे खोलती, कहा करति तो काम ॥

१०९

चितवनि तेरी अट पटी, भामिनि टेढे बँन ।
मन की गति जन कयो लहै, हार रहे जब मँन ॥

हे नाथक ! कुछ इधर का भी कीजुव देखते ही ? जरा ध्यान देकर देखो तो सही, वह कत्र स टट्टी को अँगुनिय स पाडवर तुम्हारा और एक टव देखती डटी हुई है । १०४

.

इन आँसों ने सच्चा प्रम तो एक मात्र सरोवर के हृदय में देखा है । अपने मित्र जल के बिछुडने पर जिसका हृदय टुकडे टुकडे (विदीण) हो जाता है । १०५

जो इन नयनों को अश्रिय है व तो नित्य सामने उपस्थित रहत हैं और जो इन नयनों में बस गय हैं वे आज इनसे दूर हागय हैं । १०६

श्रेष्ठ शय्या का सकल्प ल लिया है (छोडदी है) तडफते हुए ही रात बीतती है एक पल भी पलक से पलक नहीं लगता है । तरे बिनः अल्पकाल भी कल्प के समान बीतता है । १०७

सुन्दरि ! तुमने आधी चिनील से ही सारा ससार बय में कर लिया अगर पूरी भाँटा खोलनी तो न जाने क्या काम करती ? १०८

हे भामिनि ! तेरी चित्तौ अटपटी है । और वचन टेढ़े हैं इसलिए तेरे मन का भेद जानन में जब कामदेव भी हार गया तो फिर मनुष्य कस जान सकता है । १०९

११०

है हिय रहति हई छई, नई जुगति गति जोइ ।
डोठिहिं डोठि लग दई, देह दूबरी होइ ॥

१११

दृग उरभत दूदत कुटम, जुरत चतुर संग प्रीति ।
परत गांठ दुरजन हिये, दई नई यह रीति ॥

११२

बाजिद कहा अस्तुति करे, ऐसो चद न सूर ।
आतिन के पग फिसलई, देखि निरमली नूर ॥

११३

लाल तिहारे सग मे, खेल खेल बलाइ ।
मुँदत मेरे नयन ही, करन कपूर लगाइ ॥

११४

असित सेत लोहित ललित, घोवा अबिर गुलाल ।
पिचका-कुटिल-कटाच्छ सी, नैननि माच्यो रयाल ॥

११५

अमिय हलाहल मद भरे, उज्जल स्याम सुरत्त ।
केउ जीए केऊ मरे, केउ डोलत घूमत्त ॥

जातू म यह नइ रीति दलकर हृदय में आश्चय और भय छाया रहता है कि
जहा सगती तो दृष्टि है और दुबली, देह होती है । ११०

उलभती तो आलें हैं और दूटते बुटुम्ब हैं, जुडत हैं चतुर लोगों के चित्त, और
गठि पड़ती है दुर्जनों के हृदय मे । ह दई यह तेरी विलक्षण नीति है । १११

चंद्रमा और सूर्य भी इस रूप के समान नहीं है । वाजिद साहब कहत हैं कि
इसका क्या वणन करें ? इस निमल सोदय को देखन में तो आँखो क भी पैर फिसलते
हैं । ११२

हे लाला, तुम्हारे सग यह आँख मिचीनी कौन बला है जो खेले ? मेरे नयनो की,
तुम हाथा म कपूर ँगाकर मू दत हो (अर्थात् तुम्हारे स्पर्श से गीतलता, रोमाञ्च और
सिहरन होने लगती है) । ११३

दोनों के नयनो ने होली का हुरदग मचा दिया है । आँखो की स्यामता का चीवा
दवतता की भबोर एव अरुणार्द की मनोहर गुलाल है आर कुटिल बटाक्ष की पिचकारियाँ
चल रही हैं । ११४

अमृत, विष और मस्ती स भर हुए दवेत, कृष्ण, और लाल नयना से जिनका
पाला पडा, थ कुछ तो जी उठे कुछ मर मिटे, कुछ उमत्त होकर घूम रहे हैं । ११५

११६

अमिय, हलाहल, मै भरे, दूखल धवल सुरत्त ।
केऊ विरही मरि गये, जीये धूमत मत्त ॥

११७

अमिय हलाहल मद भरे, स्वैत स्याम रतनार ।
जियत मरत भुकि भुकि परत, जेहि चितवत इक वार ॥

११८

जब लग जुग बहु जतन करि ज्ञान, दीप अरु भौन ।
तो लगि प्रय लगत नहीं, तिय दृग अचल पौन ॥

११९

दृग लौने मीठे अवर, कहत जान घट कौन ।
मीठी भाव लौन पर, मीठे ऊपर लौन ॥

१२०

नैन हमारे रसिक जन, रस ही रस पीवत ।
तुरसी रस को खान है, रस देखे जीवत ॥

१२१

धारक विधि हू पूछती मिलती, सिर तन नाँखि ।
ते हूँ देखी है कहूँ, आँखिन ऐसी आँखि ॥

नेरे नेत्र, अमृत विष, और मद्य से भरे श्वेत, काले व लाल हैं । इनके विरही कुछ तो मर गये और जो जीव हैं वे उ मत्त हुए घूमते हैं । ११६

जिन्हें, अमृत, विष और मद्यभरी हुई इन उज्ज्वल स्याम, और रतनारी अंगों ने एक बार देव लिया उनमें अमृत से प्रभावित तो श्री जाते हैं, विष से प्रभावित मर जाते हैं और मद से प्रभावित भूम भूम के गिरने पड़ते हैं । ११७

कवि पृथ्वीराज कहते हैं कि मभार में यदनपूर्वक मंजाये हुए जान दीप को तब तक ही सुरक्षित समझो जब तक कि नारी के तयन रूपी आचल की हवा न लग । ११८

अग्नि तो सलोनी है और अघर मधुर है जान कवि कहते हैं कि इनमें कौन छोटा और कौन बड़ा ? क्योंकि मन्त्री (चरकी) चीज के बाद भीटा दबिबर होता है और भीठी चीज के बाद सलोनी । ११९

मे हमार नयन अत्यन्त रसिक हैं, सुरसी कहते हैं कि म रस ही का पान करने हैं रस को देखकर ही जीत हैं और स्वयं रस की गवा हैं । १२०

यदि एक बार ही विधाता मिन जाने, तो चरणों म गीग नवीकर पूछता कि 'तने भी वही अंगों में ऐसी अंगि देती है ?' १२१

१२२

लौनें हूँ साहस सहसु, कीनें जतन हजार ।
लोइन लोइन-सिन्धु तन, पैरि न पावत पार ॥

१२३

छुटे न लाज न लालची, प्यो लखि नैहर-गेह ।
सटपटात लोचन खरे, भरे संकोच सनेह ॥

१२४

रुख रूखी मिस रोप मुख, कहत रूखीहे बैन ।
रूखे कैसे होत है, नेह चीकने नैन ॥

१२५

आज कछू और भये, छए नए ठिक ठैन ।
चित के हित के चुगल, ए, नितके होहि न नैन ॥

१२६

पल सो है पगि पीक रँग छल सोहै सब बैन ।
बल सोहै फत कीजियत, ए अलसोहै नैन ॥

१२७

चलत ललित श्रम स्वेदकन-कलित, अरुन मुख ते न ।
बन बिहार याकी तरुनि, खरे थकाए नैन ॥

हजार साहस बटोर कर हजार यत्न करने पर भी लावण्य रूपी सागर को तैर कर मे नयन पार नहीं पारहे हैं । १२२

पीहर के घर में प्रिय को देखकर न तो लाज छूटती है और न प्रिय को देखने का तालब ही छूटता है, अतः सचाब और स्नेह शोना से मरे नयन सटपटा रहे हैं (स्नेहवशा देखने हैं लाजवशा भुन जाते हैं) । १२३

कितना ही सह रहित माव का ढोंग किया, चिढ़े हुए मुँह मे रूमे वचन बहे फिर भी स्नेह से चीकने नयन रूमे नहीं हुए (उनसे प्रेम प्रकट हो ही गया) । १२४

हृदय के प्रेम के चुगलखोर ये नयन हमना जैसे आज नहीं है । आज तो ये कुछ और ही ठाट बाट मे छाव हुए हैं (किमी से लड गये दीखते हैं) । १२५

पलकों पान की पीक के रंग मे पगी हुई हैं, प्रत्येक वचन छन भरा गोमित हो रहा है अब इन घालस्य भरे नयनों की बलपूर्वक क्या सामने आ रहे हो ? १२६

वन विहार से यकी हुई युवती के द्वारा अच्छी तरह थकाए हुए (स्थिर हुए) नायक के नयन, सुन्दर तथा परिश्रम क पीछीने की दूँगा मे विभूषित नायिका के लाल मुख से हटते ही नहीं हैं । १२७

१२८

हँसि हँसाइ उर ल्याइ उठि, कहि न रखीहे बँन ।
जकित थकित ह्वँ तकि रहत, फरत तिलोछे नैन ॥

१२९

जदपि चवाइनु चीकनी, चालत चहुँ दिसि सन ।
तऊ न छाँडत दुहुन के, हँसी रसीले नैन ॥

१३०

सही रंगीलं रति जगँ, जगो पगो सुख चैन ।
अलसोहँ सोहँ कियँ, फहँ हँसोहँ नैन ॥

१३१

दूरघो खरे समीपकी, लेत मान मन मोद ।
होत दुहुन के दृगनु ही, बत रस हास विनोद ॥

१३२

खिचै मान अपराध हूँ, चलिगै बढँ अचैन ।
जुरति डीठि, तजि गिस खिसी, हँसे दुहुँनु के नैन ॥

१३३

फपट सतर भोहँ करी, मुख अनखीहे बँन ।
सहज हँसोहँ जानिकरि, मोहँ करति न नैन ॥

सुरमा छुडाने के लिए तलसिक्त वस्त्र पोछे हुए नयनों को वह तायक स्तम्भ होकर देग रहा है अतः अब तू हँस, और जमे भी हँसा, अब रुसे वचन ग कह, उठकर उसे गले लगाते । १२८

यद्यपि चुगलियों से भरी लोगों की सन चारो ओर चल रही हैं फिर भी दोनों के रसीने नयन परस्पर में हँसाना नहीं छोडते । १२९

तू सुप चन से पगी हुई किसी रगभरे रतिजो में रात भर जागी है । इस सचाई कोप-नेरे आलम से उनीदे नयन जो सामने करने पर हँसते हुए से हैं-प्रकट करते हैं । १३०

उन दोनों के नेत्रों में ही बातों जैसा आनन्द और हास परिहास का खेल हो रहा है । अतः वे दोनों दूर दूर सडे रहने पर भी सामीप्य का आनन्द मान लेते हैं । १३१

नायिका के नेत्र, मान से और नायक के नेत्र अपराध स लिखे हुए होने पर भी, परस्पर न देवने की बेचनी से एक दूसरे की ओर चले गये और दोनों ही के गयनों ने मिलने ही रोप और सजा को छोड हँस दिया । १३२

बनायटी कपट से क्रोधसूचक देवी भीठ कर लिभे हुए अनुचित वचन मुँह पर ला रही है, किन्तु अपनी नयनों को स्वभावतः ही हँसोड जानकर प्रिय के सामने नहीं करती है । १३३

१३४

गडो कुटुम की भीर मे, रही बैठि दे पीठि ।
तऊ पलकु परिजात इत, सलज हँसौहीं डीठि ॥

१३५

दृग दुति दमकनि में न कछु, लखी परी अनुहारि ।
मो मनु हँसि हरि लं गई, गुल अनार सो नारि ॥

१३६

नेक हँसौहीं बानि तजि, लरयो परतु मुँहुँ नीठि ।
चोका चमकनि चौध में, परति चोध सो दीठि ॥

१३७

चकी जकी सो ह्वँ रही, बूझँ बोलति नीठि ।
कहू डीठि लागो लगी कै, काहू की डीठि ॥

१३८

लौने मुँह दीठि न लगै यौ कहि दीनो ईठि ।
दूनी ह्वँ लागन लगी, दिर्य दिठौना दीठि ॥

१३९

जे तब होत दिखा दिखी, भई अमो इक आंक ।
दग तिरोछी दीठि अब, ह्वँ वीछी को डांक ॥

परिवार की भीड़ में घिरो हुई है और मुझे पीठ देकर भी बँठ गई है फिर भी पल भर के लिए उसके मुस्कराहट और लाज भरे नयन इधर पड़ हो जाते हैं । १३४

नेत्रों की चमक में कुछ ठीक सी दिवाई तो नहीं पड़ी किन्तु कोई अनार के पूत्र जमी नायिका हँसकर मेरा मन हर ले गई । १३५

हे सखि ! हँसते रहने की आश को जरा छोड़ दे क्योंकि तेरे चीने की चमक से पदा होने वाली चौध में आँखें चौंधिया जाती हैं और तेरा मुँह देखने में बढिआई होती है । १३६

चकराई सी आर स्त-घ हुई नायिका पूछने पर भी (छेड़ने पर भी) बड़ी कठिनता से बोलती है मालूम होता है वही पर इगकी नजर लग गई है या किसी की नजर इसकी लग गई है । १३७

हित चाहने वाली ने तो यह कहकर लिठीया जगाया था कि इस सलीने मुँह पर किसी की दृष्टि (नजर) न लगे, पर तु दिठीने से ता दृष्टियाँ दूनी होकर जगने लगीं । (दिठीने से मुन्दरता बढ गई अत दृष्टि हटती ही नहीं है । १३८

देखा देवी होने समय त्रों तिरछी नजर अमत के सामान लगी थी वे ही अब विरह में विच्छू के डक सी हाकर जला रही हैं । १३९

नैना अदरि पैठि कै, मोत लखी चित लाइ ।
डरती पलक न खोलहैं, मति सुहिणो हूइ जाइ ॥

१४१

मत चलाउ, मो सापुहैं, इनको पैनी वार ।
नजर-करारी-बाँकुरी, पल-म्याँनै करि, यार ॥

१४२

सखी तुम्हारे दृगनि की, सुधा मधुर मुसक्यानि ।
बसी रहत निस द्योस हू, अब उनकी अँखियानि ॥

१४३

जब तैं मो ऊपर पडो, स्याम सलोनी जोति ।
लौनी लागे भीत ज्यो, देह दूबरी होति ॥

१४४

दिन दिन दुगुन बढे न बयो, लगनि अगनि की भार ।
उनै-उनै हग दुहोनि के, बरसत नेह अपार ॥

१४५

तलफत घाइनि जोत्र की, कौन जियावत धानि ।
जो न होति उन दृगनि मे, सुधा मधुर मुसक्यानि ॥

प्रिय को नयनों में लाकर, प्राण मूँदकर चित्त लगाकर दख रही हूँ और डरती हुई पलकों को इसलिए नहीं चोलती कि कहीं सपना न हो जाय । १४०

कृपया इन बाँकी और करारों नज़रों का पना चार मुँह पर मत करो । हे मित्र, इस नेत्रों की तलवार को पलकों की म्यान में (बंद) करलो । १४१

हे सखि ! तुम्हारे नयनों की अमृत मधुर मुस्कराहट अब उनकी आँखों में दिन रात बसी रहती है । १४२

जिम दिन से मेरे ऊपर श्याम की सलीनी दृष्टि पड़ी है उसी दिन से लीनी लगी (कालर खाई) भीत की तरह मेरी देह दुबली होती जा रही है । १४३

लगन रूपी अग्नि की लपट दिन दिन दुगनी होकर क्यों न बढ़े जबकि वन दोनों के उमंगे हुए नयनों से अपार स्नेह बरसता है । १४४

घावों से सडफन हुए का कौन साकर जिन्नाता, यदि उन नयनों में अमृत के समान मधुर मुस्कराहट न होती (उसी से घायल हुए और उसी को याद कर जीते हैं) । १४५

१४६

कौन बसति है कौन में, यों कछु कहो परै न ।
 पिय नैननि तिय नैन है, तिय नैननि पिय नैन ॥



कौन किसमे रहता है ? यह बट्टा नहीं जा सकता क्या पता प्रिय के नयनों मे
तिय नया रहते हैं या तिय नयनों मे प्रिय नयन ? १४६



अवश नयन

१४७

वे चितवन मोचित परे, तबतें चित्त न आन ।
लोचन मे लोचन गडे, लोचन मोचन-प्राण ॥

१४८

नैना नंक न मानहीं कितौ कह्यौ समुभाइ ।
तनु मनु हारे हूँ हँसै तिनसौ कहा बसाइ ॥

१४९

एक दिना देखे सखी, हुते बजावत बोन ।
मेरे नैना मोहिँ लै, भये, जाय आधीन ॥

१५०

मन राख्यौ बीरायके ज्यौ राख्यो समुभाइ ॥
नैना बरजे ना रहै मिलै अगाऊ जाइ ॥

जब से उन तिरछी चितवनों को मैने देखा है तब से चित वश में नहीं
हे क्याकि प्राणों को हरने वाले वे नयन मेरे नयनों में जुभ गए हैं । १४७

मने कितना समझाकर कहा पर ये नयन जरा भी नहीं मानते । जो
उन मन हारने पर भी हसते रहें उन पर किसी का क्या जोर चले । १४८

हे सखि ! एक दिन बिन बजाते हुए कृष्ण को मैने देखा था वस, उसी
दिन से मेरे नयन मुझे लेकर उसके आधीन हो गये । १४९

समझा बुझाकर रोके हुए की तरह माको तो बहलाकर वश में कर लिया
कि तू ये नयन किसी भी तरह मना करने पर भी नहीं मानते और सबसे भागे जाकर
मिलते हैं । १५०

१५१

नैन मिले जे ना रहे ना, अपजसहि उराय ।
प्रोतम आयत देखिके, मिलन अगाऊ जाय ॥

१५२

नैना बग्जे ना रहे जित बरजौ तित जाय ।
जा सौ मेरे रुसनी, ताही सौ मिल जाय ॥

१५३

प्रोत सबे कीऊ करत, इति ही आनी बाज ।
मो प ए आवे नही, अलियाँ आशिक बाज ॥

१५४

मेरे बरजे ना रहे, गये पेम रस लेन ।
अपवस तें परवश भये, ए विसवासी नैन ॥

१५५

साजे मोहन मोहको मो हीं करत कुचैन ।
कहा कहुँ उलटे परे, टौने लीने नैन ॥

१५६

लोक-लाज-डर जाय को मेटेँ सब गुन गाय ।
विदस भई डोलौँ सखी, इन नननि के साथ ॥

एक बार मिले हुए नयन रोकने से नहीं रुकते हैं और न बदनामी से डरते हैं व ता प्रिय को आता हुआ देखते हैं। मिलना व लिए पहिले से आगे बढ़ जाते हैं। १५१

इन आखों का जहा व लिए मना किया जाता है वहीं ये जाती हैं और रोकने पर भी नहीं रुकती हैं। जिससे मुझे मान करना (रुटना) है उसी से मिल जाती है। १५२

प्यार तो प्राय सब ही करने हैं पर इन आखा से मैं बाज आई। ये आशिक से खेलने वाली मेरे वश में ही नहीं आ रही हैं। १५३

मेरे द्वारा मना करने पर भी ये मेरे विश्वस्त नया नहीं माने और प्रेम रम लेने चले गये, और अब अपने वश में न रहकर पराये वश हो गये। १५४

माहन का मोहित करन के लिए सिद्ध किये गये नयन रूपा टीने मुझे ही दुखी करने लगे। मैं क्या करूँ ? ये सलीने तथा टीने ता उलटते आ पडे। १५५

हे सखि ! लाक लाज से अब कौन डरे ? मैं तो सारे गुण्य प्रवगुण्य की चर्चा को मिशती हुई मजबूर होकर इन गफों के साथ डालती फिरती हूँ। १५६

१५७

श्रीर कछू सूभै नहीं, दई दुहाई मैन ।
वाही के संग ह्वै गये नैननि लागे नैन ॥

१५८

रहै निगोडे नैन डिगि, गहै न चेतु अचेतु ।
हौ कसु करि रिसकं करौ ए निसखे हसि देत ॥

१५९

कैवा आवत इहि गली, रहौ चलाइ चलौ न ।
दरसन की साधै रहै, सूधे रहै न नैन ॥

कामदेव की दुहाइ के कारण नयनों से लगे हुए नयन उसी नायक के साथ हो गए हैं। उसने सिबाप टूटे कुट्ट भी दिखाइ नहीं देता। १५७

ये निचोटे नयन डिग ही जाते हैं। और नाममङ्ग समझने भा तो नहीं, में हद होकर मान (रीस) करती हूँ पर ये हँस देते हैं। १५८

कई बार इस गली में आने पर उसे देखने के लिए इन नयनों को चलाकर धार जाती हूँ पर ये (लाजवश) साथ नहा रहते अतः दर्शन की साथ बनी ही रह जाती है। १५९



गडे नयन

१६०

मैं जबके दरसे पिया, गसे नैन तिस काल ।
रहे फसे निकसे नहीं, बसे न फिरके भाल ॥

१६१

घूँघट पट की श्रोत मे, खबर परी कछु नाहि ।
लोचन लालन मे रहे, लालन लोचन माहि ॥

१६२

रमताँ अटके नैन दुइ, नैक न मटके जाहि ।
उह छवि नैनन मे गडो, नैन गडे छवि माहि ॥

१६३

कुच गिरि चढि अति थकि तह्वँ, चली डोठि मुँह-चाड ।
फिरि न टरी परियँ रहा, गिरी चिबुक की गाड ॥

मैंने जब प्रिय को देखा था तभी नयन यहा चुभ गये थे और तभी से फँस रहे हैं
निबलते नहीं हैं । अभी तक लौटकर मेरे ललाट मे नहीं रसे । १६०

मेरी आसों म तो न दलान समा गये और नन्दान में मेरी आँखें समा गई
किंतु घूँघट की ओट म किसी को भी कोई पता नहीं लगा । १६१

खेल ही खेल म ये नयन ऐसे अन्के हैं कि जग भी इधर उधर नहीं बिये जाते
क्योंकि, वह छवि तो आँगों म गड गई और आँखें उम छवि में गड गई हैं । १६२

स्तन रूपी पहाड़ों पर चढ़ने मे अत्यंत धीरी हुई दृष्टि प्रबल इच्छा से मुँह की
ओर चली पर तु बिबुव के गन्डे म तेगी गिरी कि फिर य । ते न टन सकी । वहीं पडी
रही । १६३

१६४

डारे ठोडी गाड गहि, नैन-बटोही मारि ।
चिलक चौघ मे रूप ठग, हांसी फांसी डारि ॥

१६५

नैना अटके नेह सों गडे रूप मे जाय ।
चहलें परि निकसै नहीं, मनो दूबरी गाय ॥

सी-दर्य रूपी ठग ने चिलक रूपी चकाचीघ मे मेरे नयन रूपी पयिवा को हूसी रूपी पांसी डाल, मारकर ठोडी के गड्ढे म डाल दिया है । १६४

नेह से अटके हुए नयन, रूप मे गड गये और अब निकल नहीं सकते । जसे दुबली गाय कीचड म पडकर नहीं निकल सकती । १६५



अनुरक्त नयन

१६६

नैना पकज अरुण अति, जगे पगे अनुराग ।
मानो पुतरी स्याम मधि, मधुकर लेत पराग ॥

१६७

अरुण वरन डोरे वने, भीजे पेम मँजीठ ।
देखे लोयन लाल के, रंगी जात है डीठ ॥

१६८

बाल, कहा लाली भई, लोइन कोइन मांह ?
लाल, तुम्हारे दृगनि की, परी दृगन क छाँह ॥

१६९

छिरके नाह नवोड-दृग कर-पिचकी जल जोर ।
रोचन रंग लाली भई, विय तिय-लोचन कोर ॥

प्रेम से पगे हुए ये लाल नेत्र कमल के समान हैं और बीच की वाली पृतली मानों पराग चूमने वाला भ्रमर है । १६६

प्रेम-मजीठ से भीगे हुए नेत्रों में लाल लाल डोरे बन गये हैं । उन्हें देखकर मेरी दृष्टि भी रगी जा रही है (अनुराग पैदा हो रहा है) । १६७

अरी बाला ! तेरे इन नयनों के कोषा में लालिमा कहाँ से आई ? ऐसा पूछने पर बाला ने उत्तर दिया कि—हे लाल ! तुम्हारी ही आँखों की परछाँही इनमें पड़ रही है । १६८

जब क्रीडा में चापल ने तो नई दुःखिन के नयनों की हाप की पिचकी द्वारा छिड़के थे किन्तु दाह के कारण सौतिन की आँखें रोचन के समान लाल हो गईं । १६९

१७०

कत लपटइयतु भो गरें, सो न जु ही निसि सैन ।
जिहि चपक बरनी क्रिये, गुल्लाला-रंग नैन ॥

१७१

पिय-मुख-पकज भे परे, तिय-दृग मधुप उडाइ ।
अरुण भये रस पान बस, राग पराग लगाइ ॥

१७२

मोहि कहत कत बाउरी करें दुराउ दुरै न ।
कहे देत रंग राति के, रंग निचुरत से नैन ॥

१७३

तरुण कोक नद-बरन वर, भए अरुन निसि जागि ।
वाही के अनुराग दृग, रहे मनो अनुरागि ॥

१७४

वान बनाये ना बनें, पूछे पिय अंगराग ।
कहे देत है प्रगट ह्वै, भरे नैन अनुराग ॥

त्रिस चपक वरनी ने आपक नयन गुल्लाना पुष्प जमे लाल कर दिये हैं और रात में जो आपकी शय्या पर थी वह मैं नहीं हूँ मुझे व्यथ ही क्यों गले लगा रहे हो ? १७०

नायिका क नयन रुपी अमर उडकर प्रिय के मुल-कमल में जा बडे । और अनुराग के पराग का रस पोकर लाल हो गये । १७१

धर्म्य ही मुझे पागल या मानी क्यों कहने हो ? ये बातें छिपाने से नहा छिपती । रात के रगों को ये रग निचुडती छाँवे स्पष्ट कह दती हैं । १७२

रात भर जागन स तुम्हारे नयन तिले हुए कमल के मुन्दर रग जमे लाल हो गय है माना उसके अनुराग से ये अनुरजित है । १७३

अनुराग के विषय में प्रिय द्वारा पूछने पर कोई भी बहाना नहा बनता, क्योंकि अनुराग से भरे ये नयन प्रकट रूप स सब कुछ कह देते हैं । १७४



मानिनी आँखें

१७५

नैन लखन मिलि मज किय, नवल रीस रस सधि ।
लै मन माननि आपनों, पियहि समप्यो बधि ॥

१७६

मेरी जिय तरसत रहै, तो मन बसो अनेक ।
नैनन देखत यह भई, भयो करेजा छेक ॥

१७७

तुम सों कीजै मान क्यो, बहु नायक मन रज ।
बात कहत यों बाल के, भरि आये दग-कज ॥

१७८

कत सकुचत, निधरक फिरो, रतियो खोर तुम्है न ।
कहा करी जो जाइ ए, लगै लगोहे नैन ॥

मानिनी नववधु ने नयन और कानों की मंत्रणा द्वारा रोप और प्रेम में सुलह करवा अपने मन को बाँधकर प्रिय को समर्पित कर दिया । १७५

मरा जीव तो तेरे लिए तरसता है और तरे मन में भय धनेकों बस रही है यह सब इन घाँखों के देखन देखते हुआ है इसलिए कलेजा छलनी हो गया है । १७६

“हे मन का प्रस न करने वाले जायक ! मैं तुमसे कस मान कहूँ ?” इस तरह कहते कहते ही प्रिया के नयन भर आये । १७७

संकोच क्यों कर रहे हो ? निधटक होकर क्यों नहीं सवत्र भटकते ? इसमें तुम्हारा रत्ती भर भी दोष नहीं है । य लगने की आदत वाले नयन कहीं न कहीं लगते ही रहते हैं । १७८

१७६

कितो कियो पाइन परी, तब तो बोली नाँहि ।
अब तो पिय सों हँसि मिली, तिरछी चितवन माँहि ॥

१८०

नहि नचाइ चितवति दृगनि नहि बोलति सुखचाइ ।
ज्यों ज्यों रुखी रुख करति, त्यों त्यों चितु चिकनाइ ॥

१८१

हम हारों कं कं हहा, पाइनु पारधो प्यौर ।
लेहु कहा अजहू किए, तेह तरेरधो त्यौर ॥

१८२

नेह रुँख वीयो दृगनि, वैन सुध-रस पाय ।
घोषम से निस्वास तें, काहे देत जराय ॥

१८३

पिय लीनो जिय लालची, सखी सिखावत मान ।
बेखत ही अँखियाँ लगीं, कैसे रहत सयान ॥

१८४

मान गुमान सब तज्यो, करै कौन विधि टेक ।
नैनन सों नैना मिले, पिय जिय भये जु एक ॥

मैंने कितन सपाय किए, पाँवों में भी पड़ी, तब तब तो प्रिय से बोली तक नहा । और अब एक ही तिरछी विनयन में हँस हँस कर गले लग रही है । १७६

। न तो नयनों को नचाकर देखती ही है और न मुस्कुराकर बोलती ही है, फिर भी तू ज्यों ज्यों अपनी रस टली करती है त्यों त्यों मेरे वित्त में चिकनाई हो रही है (हृदय स्नेहसिक्त हो रहा है) । १८०

धरी मानिनी ! हम, हा हा करने करने अब गई और प्रिय को भी तरे पाँवों में ला पटक, दूतने पर भी रोय से तवर चढाकर बया लेना चाहती हो ? १८१

अपनी ही आँवों में बोय हुए और अपने ही अमृत सम वचनों से सींचे हुए स्नेह के वृक्ष को, प्रीष्म के ममान गरम गरम निद्रवासी से क्यों जना रही हो ? १८२

प्रिय की सलीमी सूरत के लिए मेरा जीव अत्यंत लोभो है इस पर भी हे सखि ! तू मान करना सिखाती है किंतु प्रिय का दखते ही मेरी आँवें तो उससे लग गई, अब कोई सपानी कसे रह सकती है । १८३

मानिनी के नयन उधाही प्रिय के नयना से मिले त्योही मानिनी और प्रिय दोना एक येक हो गय । अब वह किसमे और कम हूठ करे ? घत उतने छटना और धमण्ड करना अब छोड दिया । १८४

१८५

चली, चलं छुटि जाइगौ, हठु रावरं सँकोच ।
खरे चढाए हे, ति श्रव, श्राये लोचन लोच ॥

१८६

नकरु न डरु, सब जग कहतु, फत बिनु काज लजात ।
सौहै फीजं नैन जो, सांची सौहै खात ॥



धाय चलिए, धापके चलन पर धापके संकीच से उसका हठ (मान) छूट जायगा । क्योकि जो सरे, चटाये हुए नेत्र थे व धब कुछ नमी पर धाये हुए है (पहले वाला रोप धब नही रहा है ऐसा उसकी माधो से लगता है) । १८५

सब सभार कहता है कि—'न भर धोर 'ट' फिर धकारण कयो धमिन्दे हो रहे हो ? यदि निरपराधी हो धोर सब्धी सीगध खा रहे हो तो जरा नयन साधने तो कीजिए । १८६

अनीदे नयन

१८७

लाल तिहारि रूप की कटो रीति यह फीन ।
या सों लागत पलक दृग, लागत पलक पलीन ॥

१८८

रूप सरूप जु पुरि रहे, पलक लगत मंहि चन ।
अहमद नींद हि ना पर, ननन रुंधे नैन ॥

१८९

आठ पहर साठों घरो जे सोव ते और ।
नैनन मे मोहन बसे, नहीं नींद की ठौर ॥

१९०

नींद देखि जल पूरि दृग, उलटि अपूठी जाति ।
यातें आवत ना इतें, बूडन तें जु डराति ॥

तुम्हारे रूप से दय की यह वीन सी रीति है कि इस रूप से जिस किसी के नयन एक क्षण भी लग जाते हैं फिर उसके पलक एक पल को भी नहीं लगते । १८७

सुन्दर रूप से नयन भरे हुए हैं प्रत पलक लगाने से उन नहीं पड़ता । महामद कहते हैं किसी के नयनों द्वारा जब य नयन बंधे हुए होते हैं तो इनमें नींद भी नहीं आती है । १८८

जो सोने हैं वे कोई भीर हा होंग, यहाँ तो घाटा ही पहर इन नयना में मोहन निवास करते हैं प्रत भीद को रहने के लिए जगह ही नहा है । १८९

बिरहन के जल से भर नयनों की देखकर निद्रा पीठ दिखा कर लौट जाती है वह भांगुओं में डूबने के डर से यहाँ नहीं आती है । १९०

१६१

अंसुवनि के परवाह मे, अति बूडिबे डराति ।
फहा कर नैनानि कौ, नौद नहों नियराति ॥

१६२

लाल पिया के विछुरते, विछुर गये सब चैन ।
भूख प्यास नौदौ गई, उर्द्ध बाहु भये नैन ॥

१६३

पल न लगत है एक पल, छिन न घटत घट सांस ।
साह समन जब तें चुभी, नैन सैन की फांस ॥

१६४

जब पल आवै भुकति पिय, दरपन देति दिखाइ ।
तब अपनी अखियान पे, अखियां रहति लुभाइ ॥

१६५

नौद भरी पल निरखि पिय, देति सु पान बनाइ ।
उत नैनन के खुलत ही, इत बीरी गिन जाइ ॥

१६६

लखि अरुभे सुरभे नहों, सब निसि गई बिहाइ ।
आरस उरभे दृगन मे, पीय रहे अरुभाइ ॥

क्या करें ? इन नयनों के पास नींद नहीं आ रही है क्योंकि वह आँसुओं के प्रवाह में डूबने से डरती है । १६१

प्रिय के बिछुडने ही सार मुख भी बिछुड गये । भ्रम, व्यास और नींद भी चली गई । एक नेत्र ऊँचे हाथ किए रहते हैं यद्यत् आँखें पटी की पटी रहती हैं, पलक नहीं लगती । १६२

समय कहत हैं कि जब से नैनों के इगारे की फाँस चुभी है तभी से एक पल भी पलक नहीं लगता है । और शय भर को भी ससासें नहीं घटती हैं । १६३

जब भी नींद के लिए पलक झुक्ने को होने हैं त्यों ही प्रिय नायिका को दरपन दिक्षा देत हैं । तभी नायिका के अगने ही नैन अपनी ही (प्रतिबिम्बित) आँखों पर लुभा जाते हैं (और नींद उचट जाती है) । १६४

जब भी पलकों में नींद आनी हुई प्रिय देखने ह तभी पास की बोरी बनाकर प्रिया के मुख में देना चाहते हैं, पर उधर ज्यो ही नैन खुलन हैं त्यों ही इधर प्रिय के हाथ से बोरी गिर जाती है । १६५

सारी रात बीत गई पर सो-दम देवकर उलके हुए नयन मुलके नहीं । और अब जिन नयनों में भालम उलक रहा है उही नयना में प्रिय उलक रहे ह । १६६

१९७

सखी लखें दुरि द्रुमन तें, ह्वे रहे चित्र सरीर ।
 निसि उनवोहे दृगन पं, भई दृगन की भीर ॥



परस्पर देखत हुए जिनके नरीर चित्रवत् हो रहे हैं उन्हें वृक्षों की ओट से सखियाँ देस रही हैं—रात के अनीले नयनों पर (सखियों के) नयनों की भीड़ लग गई है । १६७



छविछाके नयन

१९८

रूप वैस मदिरा मदन, मदन मद रिसे नैन ।
प्रेमछके पिय छविछके, हटके नैकु रहै न ॥

१९९

वहके सब जियकी कहत, ठौर कुठौर लखै न ।
छिन औरें छिन और से, ए छवि छाके नैन ॥

२००

तकि री मुख की और दृग, रहे चोप चित चाइ ।
छक री रहे निदान अब, प्रीति पियाले पाइ ॥

२०१

रूप देखि ललचात अति, ठौर कुठौर गन न ।
छिन औरें छिन और से, ये छवि छाके नैन ॥

रूप यौवन और मंगरा के मर्दों में एव काम के प्रभाव से मस्त हुए नयन प्रिय की गोभा की छाव से छक रहे हैं इसलिए हटकन पर जरा भी नहीं रहते । १६८

मद मत्त, चढ़का हुआ व्यक्ति जगह बेजगह नहीं देखता हुआ अपने हृदय की सब बातें कह बैठता है उभी प्रकार रूप माधुरी से छने हुए नयन, क्षण में कुछ और क्षण में कुछ भाव प्रकट कर रहे हैं । १६९

उमग से जी भरकर उसके मुख की ओर घट्ट देखन रह और अंत में प्रेम के प्याल पीकर मद मस्त हो गये । २००

मुदर रूप देखकर अत्यंत गलचाय हुए देव, बाल को न गिननेवाल, छवि में छक ये नयन प्रतिक्षण और ही तरह के हात जा रहे हैं । २०१

२०२

थकित भये पिय देखिके, देत न ग्रावै सैन ।
छवि छाकें लै छकि रहे, भये रूप बस नैन ॥



प्रिय को (बहुत देर एकटक, देखकर नयन थक गये हैं जब इनमे सैन भी नहीं की जा सकती है । ये शोभा रूपी धाक से भ्रमाये हुए, रूप के वश में हो रहे हैं । २०२



विशाल नयन

२०३

बड़े आपने दृगन कौं, तुम कहि सकौ सु मैं न ।
पिय नैनन भीतर सदा, बसत तिहारि नैन ।

२०४

मेरे नैननि सो कहे, बड़े बड़े सब लोइ ।
देखे तें पिय बसि परं, अनदेखे दें रोइ ॥

२०५

यूं रहीम सुख होतु है, बड़े आपनी गीत ।
ज्यो बडरी अखियानि लखि, आखिन ही सुख होत ॥

२०६

बहुधा बैरी गीत के, सही गीतियन जानि ।
बड़े नैन खटकन लगे, नैन हियन में आनि ॥

अपने नयनों को तुम भले ही विशाल बतलाओ मैं तो नहीं बतलाती क्योंकि ये तुम्हारे नयन तो प्रिय व नयनों में सदा बसते हैं (इसलिए प्रिय व नयनों से तो छोटे हा हैं) । २०३

मरी आँखा की सब लोग बड़ी बतलाते हैं पर य तो ऐसा है कि प्रिय की देखने पर तो उसके चरण में ही जाती है और बिना देखे रोने लगता है (यह क्या बढप्पन ?) । २०४

रहीम कहते हैं कि अपने वश की वृद्धि को देखकर जैसे सुख अनुभव होता है उसी प्रकार बड़ी आँखों की देखकर लक्ष्मणने वाली आँखों को सुख होता है । २०५

प्रायः अपने गौरव व लोग ही शत्रु होते हैं यह बात सही है, य बड़े नेत्र अ य नेत्रों व हृदय में छटकन लग हैं । २०६

व्यथित नयन

२०७

हिपी जरापी बाल की, अनल श्रोज निज में ।
ता पर तेरे देत दुख, लाल सलीने नैन ॥

२०८

पग परसन कौं कर तपे, खवन सुनन कूँ बैन ।
हृदौ तपे तुव मिलन कूँ, मुख देखन कूँ नन ॥

२०९

जो निरखौं तो स्याम कौं, कं पल रहौं लगाय ।
इन नैनन की नेम यह, और न कछु सुहाय ॥

२१०

नैन उदासी चितरहे, बिन देखे नहिं चन ।
प्रीतम प्यारे जय मिले, तब सुख पावै नैन ॥

एक आग तो कामदेव ने अपनी आग का तावना से (उस) बाला का हृदय जला ही रक्खा है और उस पर हलाल ! तारे में 'सलाने' नयन दुःख दे रहे हैं (जले पर नमक) । २०७

हाथ, चरण स्पर्श न लिए कान मांठे घबन मुनने क लिए सतत हैं परन्तु नयन तो केवल दर्शन के लिये ही सतत हैं । २०८

इन नयनों ने यह निश्चय लिखा है कि प्रणय देगू तो केवल कृष्ण का ही देखूँ, अन्यथा पलक झुँद कर ही रहना आया, क्योंकि स्वाम क अतिरिक्त इन्हें कुछ नहीं मुहता है । २०९

ये उदास नयन बाट देखन रहन हैं क्योंकि इन्हें प्रिय को दर्शने बिना सुख नहीं।
अतः जब प्रियतम मिलेंगे तभी इन्हें सुख होगा । २१०

२१७

श्रीर हंसनि श्रीर लसनि, श्रीर कसन फटि ठौर ।
नैन चुगल कानन लगे मन करि डारचौ श्रीर ॥

२१८

चिन्ता-चमक उदास मन, नींद गई तन-छीन ।
मदन सदन भाव नहो, इन नननि इह कीन ॥

२१९

पेम पगे रस के सगे, मद रंग मगे विसाल ।
नैन लगे तुब नागरी, ठौर ठगे नदलाल ॥

२२०

ज्यों मन मेरी गति करे, त्यो जो करे सरीर ।
तो हू दरसन पाइकर, दूर करौं चख-पीर ॥

२२१

इन दुखिया अंखियाँ कौं, सुखु सिरज्योई नाहि ।
देखे बने न देखते, अनदेखें अमुलाँहि ॥

२२२

तन मन तलफत रहत हैं, कहे जात नहि बेन ।
बिन देखे महबूब के, भये जहमती नन ॥

जब से चुगलखार नयन कागों से लगे हैं तभा से हँसना शरार का शोभा और गठन, एव वट्टि प्रदश गार हा तरह का हो गरा है और ता और मन का भी और ही प्रनार का कर दिया है । २१७

इन नयनों ने यह कर दिव्याया—कि बि ता की चमक से मन उदास रहता है, नींद नहीं आती शरार कुछ हा गया और घर नहा सुता है । २१८

प्रेम मे पाग हुए नया रस के निकट सम्बन्धो व मन्ती की रगत में माने इन तर विशाल नयनों द्वारा नदलान का ठगा जाता उचित ही है । २१९

जिस प्रकार मेरा मन शास्त्रगामा है उसा प्रकार यन् शरार का चाल भी तेज हा जाय तो इसी क्षण तुम्हारे दर्शन पाकर मन नयना का वेदना दूर करलूँ । २२०

इन दुखियारी माँया व लिए मुख तो जले (विधि न) बनाया ही नहीं हैं क्योंकि प्रिय को देखने पर तो न-शापन देगत गहा प्रनता और न खने पर ये व्याकुल हो उठती ह । २२१

गरीर और मन का तडफन भुँह से ता नहीं कही जा रही है पर प्रिय को देखे बिना मे माँसें दुखी हो गई ह । २२२

२२३

जमला तरफत दिन गयो, आइ रैन जिय लैन ।
बिनु देले महबुब के, भये जहमती नैन ॥

२२४

निसि-दिन इक टक राखिये, निमिष न इत-उत जात ।
नैननि नैन लगे रहें तोड न नैन सिरात ॥

२२५

जिन नैननि रस ढरनि सो, चित्त चौगुनीं चैन ।
चहें कोद भटकत फिरै, कहा भये वे नैन ॥

२२६

पल पल प्रीति बढाइके, अब लागे दुख दैन ।
जिन नैना तुम देखते, कहा भये वे नैन ॥

२२७

भूरत ही भूरत लखत, तनक तनक नाहि चैन ।
चोरत गुरु-जन चलत चित, दूखन आये नैन ॥

२२८

मैं ही जान्यो लौइनतुँ, जुरत बाढि है जोति ।
को हों जानतु डोठि कौ, दोठि किर किटो होति ॥

जमना कहत है कि तिन ती तडफत हुए बीत गया पर अब रात इस जीव को लेने का पहुँची प्रिय को देखे बिना नेत्र बहून दुम्बी हो रह हैं । २०

एक क्षण भी इधर उधर न जाय बिना रात तिन एकटक रगकर नयनों से नयन लगाए रहने पर भी ये नयन गीतन नहीं होत (नृत नही होत) । २०४

द्विन रग बरमान काज नयना म कित्त में चौगुला बन होता का प्राजकन वही चारो धार भटकत रूने हैं और क्या ये बना हो गय हैं । २०५

पहत तो मणु मणु मे प्रेम का बनाया और अब दुःख देने लग, जिन नेत्रों में तुम पहले देखा करन थ अब उन्मत्त बना हा गया ? २०६

ठर ठहर कर पाटा थोडा गुणजनों म बचा बचाकर प्रिय की मूरत देखने केवन नयन दुखन का तद, फिर भी बन नही है । २०७

मैंन तो जाना था कि इन नयनों व मितने मे ज्यादा बन्धी पर मैं यह जानतो थी कि भाव म पही हूँ प्राण, किरकिरी मो हो जायगी । २०८

आँसू भरे नयन

२२६

हों न कहत तुम जानिही, लाल बाल की बात ।
आँसुवाँ उडुगन परत है, होन चहत उतपात ॥

२३०

बिछुरत रोवत दुहुँन कौ, सखि यह रूप लखै न ।
दुख आँसुवाँ पिय-नैन है, सुख-आँसुवाँ तिय नैन ॥

२३१

आनंद आँसुन सो रहे, लोचन पूरि रसाल ।
दीनी मानहुँ लाज कौ, जल-अजुलि वर-बाल ॥

२३२

पानिप पूर पयोधिमे, नेक नहीं ठहराइ ।
नैन मीन ए, पलक में, मन जहाज डिगि जाइ ॥

हं मान । मैं कुछ नहीं कहती, आप स्वयं उम्र बाना के हृदय की बात जानने दी ।
आप तो प्रस्थान कर रह हा और माना क आसू रूपी तार टूटकर गिर रहे हैं, कोई
उत्पात होने वाला है । २२६

विद्युत् के समय गीनों की आँखा म आँसू आ रहे हैं इस रूप को हं सखि
जरा देल तो सही, प्रिय क नयना म विद्युत् के दुर क आँसू आ रहे हैं (वम इमी
कारण) तिया क नयनों में मुख के आँसू छनक आये । २३०

रसील नयन आन-दाशुआ से भर गय मानो सुन्दरी बाला ने लज्जा को जला
ज्जलि देती हा (लज्जा को त्याग दिया और सबके सामने रो पड़ी) । २३१

(अश्रु) ममूत्र क जन प्रवाह म य नयन भीन जरा भी ठहरते नहीं हैं अत एव
क्षण ही में मन का जहाज टिग जाता है । २३२

२३३

पानिप पूर पयोधि मे, रूप जाल बगराइ ।
नैन मोन ए नागरिन, वर बट बाँधत आइ ॥

२३४

अजन जुन अँसुवानि की धार धसति जुग नैन ।
मनो डोर मखतूल के, बाँधे सजन नैन ॥

२३५

मेरे दृग-वारिद वृथा, बरसत वारि प्रवाह ।
उठत न अकुर मेह को, तो उर अतर माँह ॥

२३६

नए विरह-अँसुवानि को, छिन छिन होत उदोत ।
अँसियनि लग्यो अपार बह, तन पानिप को सोत ॥

२३७

बिन देखे दुख के चलै, देखे मुख के जाहि ।
कही लाल इन दृगन तँ, अँसुवाँ बयो ठहराहि ?

२३८

अहमद पच्यो न पेस रस, नैन विलग्यो हूक ।
ज्यो मतगारी मद पिचै, छरदि करत अरबूक ॥

पानी व प्रवाहवाले सागर म अथवा समुद्रा के प्रवाहवाले सागर में रूप का जाल फटाकर ये नयन रूपी मछलिया नागरिना को जबरन फँसा कर बाँध लेती हैं । २३३

अजन का रग निण हुए समुद्रा की घारा दोनो नयनो म ऐसी लगती है मानो मखतूल के डोरो से नयन रूपी खजन बाँधे हुए हो । २३४

मेरे नयन रूपी बादल साँघ ही अथु जल का प्रवाह बरसा रहें हैं जबकि तेरे हृदय म नेह का अकुर पृटता ही नहा । २३५

नये नय विरह म क्षण गण म समूँ या रहें हैं । मानों आयो मे कोई अपाग पाना का खात लग गया हो । २३६

हे सात अब तुम्हा बनाया, उन आँवों के समूँ कैम ठहर जब कि जिना देमे तो दुम व और अपने पर मुन व समूँ आत हैं । २३७

जस कोई गारामी अत्रिक गाराय पीकर पमन करता है । उसी प्रकार अहमद बहने हैं इन समूँ को भी काद बरबानी लग गया है इत प्रेम का रस पचा नहीं है यही समूँ हाकर बह रहा है । २३८

२३६

नयन हमारे रहेंद-घरि, घरो न धीर घराहि ।
बिना पियारे आपने, भरि आवं डुरि जाहि ॥

२४०

पिय-वियोग तिय दृग-जलधि, जल तरग अधिकाय ।
वहनि मूल बेला परसि, वहरचौ जाय बिलाय ॥

२४१

स्रवन सुनत हिय गहबरो, गवन करत हे आज ।
नैन कलस द्व भरि लिए, पियहि बँदावन काज ॥

२४२

लटपटात लटकत चलै, अटपट बोलत बैन ।
कछु छट पट पिय सो भई, टप टप टपकत नैन ॥

२४३

नेहु न नैननु को कछु, उपजी बडी बलाइ ।
नीर भरे नित प्रति रहै, तऊ न प्यास बुभाइ ॥

२४४

स्रवन रहत हे सुजस सुनि, रसन रहत जपि सुबख ।
अरवराय फूटाहि नयन, देसन को पिय सुबख ॥

य रहैट-धनी रूपी नयन एक घड़ी भी धम नहीं रखते । प्रिय के विरह मे भर भर कर घात है और टुल टुल कर जात हैं । २३६

प्रिय के विरह से मुग्धा की आँखों में बहुत सी जल तरंगों (आसुओं) का बड़ा बड़ा समुद्र बरौनी रूपी किनारों की छू छू कर लौट कर बिलीन हो रहा है । २४०

प्रिय आज जा रहे हैं ऐसा वार्ता से सुनत ही हृदय घबड़ा उठा और आँखें आँसुओं से भर आईं मानो प्रिय को गुम सकुन दन के लिए नयन रूपा दो बलस भर लिए गये हैं । २४१

अगा को लगकाम हुए लटपटाती हुई सी चलती है और वचन भी लटपट ही बानती है । अतः मासूम हाता है, कुछ प्रिय से लटपट हो गई है तनी आँखें टप टप आसू टपका रही हैं । २४२

यह प्रेम नहीं है, भरे नयनों को कोई बड़ी बलाय उपजो है जो प्रतिदिन नीर भर रहने पर भी इनकी प्यास नहीं बुझती । २४३

प्रिय व याग को सुनकर कान शान्त हो जात है और प्रिय का नाम लेकर जीभ भी सुखी हो जाती है । पर तु प्रिय का मुख देखने के लिए ये नयन हँवडाकर फूट फूट कर रोने लगत हैं । २४४

२५१

अवलोकति मग जकि रही, अंसुव टरत असराल ।
मनु मुकताहल तोरि तिय, पोखत प्रान-मराल ॥

२५२

अंसु टरत कज्जल गिरत, हिय पर परत लकार ।
काम राज करवत विरह, ख चत यहै सरीर ॥

२५३

तन तावन गावन पिकी, घन छावन दिन नैन ।
मन भावन आवन नहीं, सावन ह्वै रहे नैन ॥

२५४

पिय चलते तिय रुदन किय, अजन ढरघो लखाइ ।
ज्यों लाला के फूल पर, भँवर बेठि लटकाइ ॥

२५५

ढरत न अंसुवा लाजतें, रहें नैन भरि नीर ।
जैसे कातीसार सों, उफन्यो गिरें न खीर ॥

२५६

बिरह अगनि तन तूल सम, आहि अवाज समीर ।
भसम होत राखें भले, नैना हाँ के नीर ॥

श्रोत्रें प्रिय की बाट देखनी देखनी स्त घ हो गई परन्तु आँसू लगातार बहती जा रही हैं मानों माती ताड़ ताड़कर प्राण रूपा हम को चुगा रही हैं । २५१

आसू गिरने के साथ कज्जल भी गिर रहा है और हृदय पर उस काये जल से बरखाएँ पड़ गई हैं और कामदेव विरह रूपा करात शरीर पर चला रहा है । २५२

कायन का मधुर गान तन को तपा रहा है, दिन रात बादल छाये रहते हैं पर मन को भानेवाला प्रिय के आन का कोई पता नहीं मन ये नयन सावन ही रह है । २५३

प्रिय के गमन समय प्रयमी के रोने से आँसुओं के साथ डुलकनेवाला अजन ऐसा लग रहा है जस लाता नामक लाल पुष्प के ऊपर बठ कर अमर लटक रहा हो । २५४

नयन, नीर से छलछला रहे हैं पर तु लज्जावग आँसू बाहर नहीं आ रहे हैं जेम कातासार के तोह से बनी कलाई से उफनता हुआ भी दूध बाहर नहीं गिरता है । २५५

विरह रूपी आग, रुई के समान शरीर में सुलग रही है और आहा की हवा भी आग का सहायता द रही है परन्तु नयन का नीर (आँसू) ही उसे भस्म हान से बचा रहा है । २५६

२६३

पाणि पलक कुत्त-बरनिका, जल आंसू द्विज-मैन ।
पिय बिछुरत मनु नोद की, लेत सकलप नैन ॥

२६४

समुभाए समुभक्त नहीं, पलक देत नाहि चैन ।
नीर भरे प्यासे मर, अजब अनोखे नन ॥

२६५

मन ही मन दुख सहत अति, कहत बने नाहि बैन ।
रात विना रोवत रहे, तसक-तिय ज्यों नैन ॥

२६६

चित-चकमक छितिया-पथर, काम-अगनि कठ गात ।
नैन-नीर बरसत नहीं, तो तन जरि बरि जात ॥

२६७

काके रंग तुम दग रंगे, देखत दुहूँ चुवात ।
इनही की बूँदन मनो, छींट छींट भयो गात ॥

२६८

स्याग तिहारे-विरह दग, करत सकज्जल रोज ।
मनो बढावत प्रेम सो, सूर सुताहि सरोज ॥

प्रिय के विछुड़न ही— पलकस्पी हाथ में, बरौनी स्पी दन तथा आंगू स्पी जन लेकर कामदेव स्पी राश्रम्य द्वारा ये आँखें मारों निद्रात्याग का मकल्प कर रही हैं । २६३

य नयन बड़े ही आँवी और आँवी के जो न तो समझाने से मानन है न एक पल भी चन से रहन दन है और जन म भरपूर रहने पर भी आँवे रहत हैं । २६४

त्रिम प्रकार चार की पत्नी मन ही मन में अत्य न तुम महती है एक न द भी कहते नहीं बनता, उमा तरङ्ग प आँव भी रात दिन रोती है कुछ कह नहीं सकती । २६५

यदि य नयन, आंगू जन नहीं बरमान ता हृत्प स्पी चक्रमक और दानी स्पी पत्थर द्वारा पदा हृद काम की आग से गरीर स्पी काष्ठ बला का जन गया होता । २६६

हे सखि ! तुमन किसक रग म अपनी आँवा का रँग निवा जो दोनों निरतर चुहनी हुई हा बीगती हैं और तुम्हारा मट गरीर भी मारों आँवों को बूँटा म छोट छोट हो गया है । २६७

हे आँव तुम्हारे विरह में ये नयन क-जन सहित आंगू बगने हैं । मारों सुय की पुत्री यमुना की य नयन कमन प्रग क कारण बना रहे हैं (सूय का और बमना का प्रेम प्रसिद्ध है, यमुना मय की पुत्री है) । २६८

२६३

पाणि पलक कुस-बरनिका, जल-आंसू द्विज-मैन ।
पिय बिछुरत मनु नीव कौ, लेत सकलप नैन ॥

२६४

समुभाए समुभूत नही, पलक देत नहि चैन ।
नीर भरे प्यासे मर, अजब अनोखे नैन ॥

२६५

मन ही मन दुख सहत अति, कहत बने नहि बन ।
रात दिनां रोबत रहै, तसकर-तिय ज्यों नन ॥

२६६

चित-चकमक द्यतियां-पथर, काम-अगनि कठ-गात ।
नैन-नीर बरसत नही, तो तन जरि बरि जात ॥

२६७

काके रंग तुम दृग रंगे, देखत दुहूँ चुवात ।
इनही की बूँदन मनो, छोट छोट भयो गात ॥

२६८

स्याम तिहारे-विरह दृग, फरत सकज्जल रोज ।
मनो बढावत प्रेम सौं, सूर सुताहि सरोज ॥

प्रिय के विछुड़ते ही— पनरूपी हाथ में, धरोती रूपी दम तथा आसू रूपी जन लेकर कामदेव रूपी साहाय्य द्वारा ये आसिं मानों निद्रात्याग का सङ्घर्ष कर रही हैं । २६३

ये नयन बड़े ही अजीब और अजीबे हैं जो न ता समझाने से मानत है न एक पल भी बँत से रहना देते हैं और जल से भरपूर रहने पर भी श्यामे रहत हैं । २६४

जिम प्रकार चोर की पत्नी मन ही मन में अत्यन्त दुःख सहती है एक पल भी बहने नहीं बनता, उसी तरह ये आस भी रात दिन रोती हैं कुछ कह नही सकती । २६५

यदि ये नयन, आसू जा नहीं बरसाने तो हृदय रूपी चक्रमन् और छाती रूपी पंखर द्वारा पदा हुई काम की आश से गरीर रूपी बाष्प अभी का जल गया होता । २६६

हे सखि ! तुमने किसके रग में अपनी आसों का रँग लिया जो जोते निरंतर चूटती हुई ही बीगती है और तुम्हारा पट गरीर भी मानों शरीर की बूँटा में छोट छोटा हो गया है । २६७

हे श्याम तुम्हारे विरह में ये नयन कञ्चन महिन आसू रगते हैं । मानों समय की पुत्री यमुना को ये नयन कमल प्रमत्त कारण बना रहे हैं (मय का और कमला का प्रेम प्रसिद्ध है, यमुना सूर्य की पुत्री है) । २६८

२६३

पाणि पलक कुस-बरनिका, जल आसू द्विज-मैन ।
पिय बिछुरत मनु नीद की, लेत सकलप नैन ॥

२६४

समुझाए समुभक्त नहीं, पलक देत नाहि चैन ।
नीर भरे प्यासे मर, अजब अनोखे नन ॥

२६५

मन ही मन दुख सहत अति, कहत बन नाहि बैन ।
रात दिनां रोवत रह, तसक-तिय ज्यों नन ॥

२६६

चित्त-चकमक छतिर्या-पथर, काम अगनि कठ-गात ।
नैन-नीर बरसत नहीं, तो तन जरि बरि जात ॥

२६७

काके रंग तुम दग रंगे, देखत दुहूँ चुवात ।
इनही की बूँदन मनो, छोट छोट भयो गात ॥

२६८

स्याग तिहारे-विरह दग, करत सकज्जल रोज ।
मनो बढावत प्रेम सों, सूर सुताहि सरोज ॥

प्रिय के बिछुटने ही— पत्रकहणी हाथ में, बरोती रूपी दम तथा शीशू रूपी जन लेकर कामदेव रूपी प्राणग द्वारा य शीशू मानों निद्रात्याग का मकल्प कर रही हैं । २६३

य नयन बड़े ही अजीब और अनोखे हैं जो न तो समझने में मानत हैं न एक पल भावन से रहने दत हैं और जन में भरपूर रहन पर भी प्यासे रहत हैं । २६४

त्रिम प्रकार चार की पत्नी मन ही मन में अत्यन्त दुःख सहती है एक गद भी कहने नहीं बनता उषी तरह य शीशू भी रात दिन रोती है कुछ कह नहीं सकती । २६५

यदि ये नयन शीशू जन नहीं बरमान तो हृदय रूपी चक्रमक और छाती रूपी पथर द्वारा पैदा हुई काम की प्राण में गरीर रूपी बाष्प बमो का जन गया होता । २६६

हे सखि ! तुमने किमके रग में अपना श्वासा का रँग लिया जा दानों निरन्तर चुगती हुई ही दीवता हैं और तुम्हारा यह गरीर भी मानो दाही की डूँटा में टाट छीट हो गया है । २६७

हे श्याम तुम्हारे तिरह में ये नयन कज्जन सहित शीशू बरगत हैं । माना सूर्य की पुत्री यमुना का ये नयन कमल प्रद क कारण बना रहे हैं (सूर्य का और कमला का प्रेम प्रसिद्ध है, यमुना सूर्य की पुत्री है) । २६८

करेरे कटाक्ष

२६६

राधा के हृग खेल मे, मूँदे नन्द कुमार ।
करन लगी हृग-कोर की, भई छदी उर पार ॥

२७०

कीन सखी अघमूँदना, तो सो खेल रैन ।
हाथ फटाछिनु फटत है मूँवत तेरे नैन ॥

२७१

तिय, तुव नैन-कटाछि ये, निकमि जात तन पार ।
बिस यह काहे देति है, अजग बारम्बार ॥

२७२

ज्ञान गाय तें लेत दुहि दुल्लभ, धीरज खीर ।
तिय-रुटाछ-काँजा परत, प्रिगरत तुरत गँभीर ॥

राजिब क नन आगमिचीनी के गेन म नरु कुमार ने मूँदे ये बम उबीमे
हाथों म आवा की तीया कीरें चुम गर और ह्मप के धारधार ओगइ । २६८

है मनि ! नरु गाय आगमिचीनी कीन गन ? तयाकि तरी आयेँ मूँदन समय
तर नीगण-अग रों प हमार ता हाथ कट जात ॐ । २७०

प्रिय ! तर गदन कया ता या नी गरीर को छेकर पार हो जाते हैं फिर
यह विष के समान अजन, बाग बार त्यों तथा ७१ हा ? - ७१

नाम ह्या गान ग ह्म ह्ममा घब स्पी टुनन दूर नागी क कटात स्पी बात्री
के पदन ही सुरत विपट जाना है । २७२

२७३

भाँह कुटिल वरुनी कुटिल, नैनहु कुटिल दिखात ।
वेधन कौं नेही हियो, ययो सूघे ह्वै जात ॥

२७४

चतुर चितेरे तुष सबी, लिखत नहीं ठहराई ।
फलम छुवति कर आगुरी, कटी कटाछिन जाई ॥

२७५

कहा करें जो आंगुरी, अनो घनी चुभि जाइ ।
अनियारे चख लखि सखी, काजर देत डराइ ॥



देखने म तो भीहू टेकी है, बरोनियां भी टेकी है और नेत्र भी वक्र है परंतु प्रिय का हृदय बीषने के लिए ये मंत्र कसे सीधे हो जाते हैं । २७३

चतुर चित्रकार भी तेरी तसवीर बनाने में सफल नहीं होते क्योंकि तेर कटापों से उनके हाथों की अंगुलियां और वाम दातों ही बट बट जाती हैं । २७४

क्या करें, जबकि घेंगुली म नयनों की सीन्धी अनी गहरी खुभ जाती है इसलिए अनियारे नयनों का देखकर वाञ्छन लगाने म सखी की डर लग रहा है । २७५



कजरारे नयन

२७६

बुरी तऊ लागै भली, भली ठौर पर लीन ।
तिय नैननि नोकौ लग, काजल जदपि मलीन ॥

२७७

रे मन रीति विचित्र इहि, तिय नैननि को चेत ।
विष काजर निज खाइक, जिय औरन को लेत ॥

२७८

यौ छवि पावत हं लखौ, अजन आंजे नैनु ।
सरस बाढ संफन धरी, मनु सिकलीगर सैनु ॥

२७९

रूप ठगोरी डारिकै, मोहन गो चित चोर ।
अजन मिस जुनु नन ए पियत हलाहल घोर ॥

दुरी वस्तु भी अच्छी जगह स्थित होने पर सुन्दर दियार्ई देने लगता है जैसे स्त्री
के नयना म काना काजल भी सुहावना हो जाता है । २७६

स्त्रियों की आँसु की यह विचित्रता है कि विष रसो काजल तो स्वयं खानी हैं
और जान दूमरों की लेती है इसविण ह मन, सावधान रहना । २७७

सज्जन आज्ञा से नयन एम सुदृशो लगने हैं खानो भिक्कीगर ने धार लगाकर
तलवार रख दी हो । २७८

रूप के द्वारा ठगो करके मोहन चित्त चुग लेगया । सब ये नयन, काजल के मिस
से हलाहल विष भी रहें हैं (जैसे मारी सम्पत्ति छुट जाने पर बोड़ आत्महत्या के लिए
विष खाना हो) । २७९

२८०

एकु तो नैना मदभरे, दूजै अजन सार ।
बूझि बावरी देति को, मद-मातेनु हथियार ॥

२८१

दीन हीन नेहीन कीं, रौंदि न करे अचैन ।
अजन आँदू भर दिए, दृग-गज-माते नन ॥

२८२

सखी प्रिया की देह मे, सजे सिंगार अनेक ।
फजरारी अखियान मे, भूली फाजर एक ॥

२८३

अपनी-अपनी ठौर पर, सोभा लहत विसेष (ख) ।
पाँय महावर ही भली, नैना अजन रेख ॥



पहल ही स य नयन मदमत्त है फिर इतम अजन कयो सारा जा रहा है परी बावरी कुछ ता विचार कर, मद स मस्त हुए को कोई हथियार दिया जाता है ? २८०

दीन हीन प्रेमियो को कुचलकर दुखित न कर दें इसीलिए इन मदमत्त नयन कुञ्जरो को अजन रूपी बही डाली गई है । २८१

सखी न प्रिया की दह में अनेको शृ गार सजाए परन्तु नायिका की स्वभावन कजरारी आँखें होने के कारण शृ गार करने समय एक काजल लगाना भूल गई । २८२

मारी वस्तुएँ अपनी अपनी जगह पर घोभा देती हैं जैसे परो मे महावर भला लयता है तो मरारो म काजल ही सुहावना लगता है । २८३



नयन वाण

२८४

कोमल कमलन से कहै, तिन्हें न नैक सयान ।
होत पार लागत हियै, नम मन के बान ॥

२८५

चपल-चित्त वेधो निरखि, याही डरनि दुरात ।
नैन बान वै देखिकं, लाज नहीं ठहरात ॥

२८६

लाल तिहारि नैन-सर अचरिज करत अचूक ।
बिन कचुक छेद करै, छाती छेद छद्दक ॥

२८७

नागरि-नन-कम न-सर, करत न ऐसी पीर ।
जैसे करत गैवारि के, दृग-धनुहो के तीर

जा इन नयनों को कमलों से भी कामल बतलात है उ-ह जरा भी विचार नहीं ।
य तो कामदेव के बाण है जा लगने ही हृदय के पार हो जाते हैं । २८४

जिन नयन बाणों द्वारा चंचल चित्त भी बीधा गया उनमें बिध जाने के डर में
लाज छिप रही है और यहाँ नहा ठहरती है । २८५

हे लाल, तुम्हारे नयन-बाण आश्चर्यजनक अचूक वार करते हैं और बिना
कवचवाली छाती को छेद देकर दत हैं । २८६

नगर में निवास करनेवाली चतुर नारी के नयन रूपी धनुषबाण वैसे पीडा
नहीं करते हैं जस एक गेंवार स्त्री की आँसु रूपी धनुषी से निकल (स्वाभाविक) तीर
पीडा करते हैं । २८७

२८८

चतुरनि के उर चुभति है, नैन-बान की चोट ।
मूरख डर लागत नहीं, मूरखता की श्रोट ॥

२८९

नैन-बान चलिवो करै, नक न थाकति नारि ।
तजि तजि मूरख जननि को चतुरनि मारति टारि ॥

२९०

चली जात चितवत श्रली, घूँघट पट की श्रोट ।
ननन के सर साधिकै, करति फिरति हैं चोट ।

२९१

लागत कुटिल कटाछि-सर, कयो न होय बेहाल ।
फढत जु हियै दुसाल क , तऊ रहत नट-साल ॥

२९२

नैन बान जाको लगै, कहि धौं श्रोपध काहि ।
कुच-टकोर पटिया-भुजा, अघर-पान पय ताहि ॥

२९३

चल-सर-द्यत अद्भुत जतन, बधिक-बैद्य निज हृत्य ।
उर उरोज भुज अघर रस, सेक पिण्ड पट पत्य ॥

नयन रूपी बाण का प्रहार चतुर नागरिकों के हृदय में ही चुभता है, मूखों के हृदय में नहीं। क्योंकि वहाँ मूखता की झोटा जो है। २८८

नयनों के बाण निरंतर चलते ही रहते हैं किंतु चलानेवाली नायिका जरा भी नहीं धकती है और मूख (प्रारम्भिक) जन का छोड़कर चतुर ध्यत्तिया को चुन चुन कर मारती है। २८९

धू घट की झोटा से सुरगित होकर यह नायिका टेड़ी चितवन से देखती हुई नयन बाणों से निगाना लगाकर फिर फिर कर चोटें करती चली जा रही है। २९०

जिसको घ वृद्धि-कटाक्ष रूपी बाण लग जाते हैं क्यों न वह बुरे हाल हो ? मानलो, यह दुष्ट शल्य हृदय से निकल भी जाय तो भी इसकी कसक या अघर दूना हूमा काटा तो रह ही जाता है। २९१

जिसको नयन बाण ने बीधा है उसका और क्या इलाज है ? उसे तो बस स्त-रों का रस दें और भुजा रूपी पट्टी से कसकर बांधें। और अघर पान का पथ्य दिया जाय। २९२

नयन बाण के घाव का अद्भुत उपाय उसी अधिक रूपी वध के अपन हाथ में है। नयन बाण से घावले के लिए उसकी विंगल शक्तों का सेक, उन्नत उरीजों का पिण्ड (पोटिस) और लम्बी लम्बी भुजाओं की पट्टी तथा पथ्य के रूप में अघर रस दिया जाय। २९३

२६४

दृगनु लगत वेधत हिर्योहि, विकल करत अंग आन ।
ए तेरे सब तें विषम, ईछन तीछन-बान ॥

२६५

बान वेधि, सब बिधे को, खोज करति हैं जाइ ।
अदभुत-बान-कटाछ, जिहि बिध्यो लग संग आइ ॥

२६६

प्रीतम नैनन मे गिरी, जिन नैनन की सन ।
फिर काढन को चाहिए, वे ही तीखे नैन ॥

२६७

अनियारे तीखे कुटिल, अकुस से दृग बान ।
लागत सीधे आयकै, पाछे खै चत प्रान ॥

२६८

भुँह-कमान, अजन-चिला, नैन-बान अतिसार ।
चतुरनि के मन-मृगनिकी, मारत नारि निहार ॥

२६९

लोयन लागे लाल सो, कहा करौ बस नाहि ।
खैचै आवै धनुष ज्यो, छूटै सर लौ जाहि ॥

ये तर बटाण रूपी पने बाण अथ सब बाणो से विलक्षण हैं जो लगते तो भाँसों म हैं पर वेधते हृदय को हैं और विषय दूसरे अंगो को करते हैं । २६४

बाण से बीधने के परचाव सन (शिकारी) जा कर विधे दृण (लक्ष्य) की लोज करते हैं, पर तु यह नयन बटाक्ष वा बाण एमा है कि इसन विधा दृया अपने आप इसी से लगा हुआ (बीधनवाने क पास) आ जाता ह । २६५

हे प्रिय, जिन ननो की सन इन मेरी आणो से आकर गिरी ह उसे निकालने के लिए व ही तीखे नयन चाहिए । २६६

धारदार, तीखे और कुटिल अकुग के सामान नेत्र रूपी बाण लगने के समय तो तीखे आकर लगत हैं पर पीछे प्राणा को खींचने लगते हैं । २६७

भीह रूपी धनुष म अज्जल की डोरी पर तीखे नयन बाण चढाकर चतुर नागरिको के मन मग को यह स्त्री दण देल कर मार रही ह । २६८

नयनों को प्रिय स लगन लग चुकी ह अब मैं क्या करूँ इन पर भरा वश नहा । वहाँ से खींचती हूँ तो धनुष की तरह कठिनता स खिंचत हैं और छोडत ही बाण की तरह छूटत हैं । २६९

कामायुध-नयन

३०६

भामिनि भौंह कमान कसि, तिलक भाल धरिभालि ।
मानो काहू मारि है, मदन आज के काल्हि ॥

३०७

किये भरोसो नैन को, नागर मेरे जान ।
ना तरु क्यो जुग जीतती, काम फूल के बान ॥

३०८

भौंह-धनुष मनमथ गहे, तिरछी चितवन बान ।
फूलन को आयुध कहा, ऐसै करत निदान ॥

सुदगी के भीहो की कमान कस कर, उमपर ललाट म पचित तिलक का बाण सवान करव माना यह कामत्रव आज या कल म किमी न किसी को अवश्य मारेगा। ३०६

मेरे विचार म ना मुत्रिया के नयना के बल पर ही मत्र कार्य हो रहा है कयथा यह कामत्रेव पुष्प बाण म दम सगार को कमे जीतता ? ३०७

पुष्पा के प्रायुष मे जब कुत्र नही हुआ तो अत मे भौह रूपी धनुष और कुटिल टाक्ष रूपी बाण की ही कामत्रेव ने धारण किया। ३०८

चंचल नयन

३०६

ऐंचि आंचि राखों तऊ, पल न एक ठहराय ।
नैनन में कठ पूतरी, जित प्रीतम तित जाय ॥

३१०

पिय की चंचल चित्त अति, तिय के चंचल नैन ।
दोऊ एक सुभाइ तें, वयो न लहें सुख चैन ॥

३११

सकुचि न रहिये, स्याम सुनि, ए सतरोंहें बन ।
देत रचोंहो चित्त कहे, नेह नचोंहे नैन ॥

३१२

चंचलता पायन हुती बाल राज के जोर ।
जोबन-नूपति अतक तें, भजी चढति दृग ओर ॥

खाचकर, पकड़कर रगने पर भी ये अर्खों की पुतलियाँ एक क्षण के लिए भी नहीं ठहरती हैं। और जिस द्वार प्रीतम बँडे हैं उसी द्वार जा रही हैं। ३०६

प्रिय का चित्त और नायिका के नयन दोनों ही अत्यन्त चञ्चल हैं। दोनों एक ही स्वभाव के होने के कारण परस्पर का सुख क्या न प्राप्त करें ? ३१०

हं घनश्याम ! रोप भरे टेढ़े वचनों की सुन, सकोच करके आप चुप न बडे रहिए (मनाते रहिए) क्योंकि नेह में चञ्चल हुए ये नयन, इस नायिका क चित्त का रचने पर आया हुआ सा कह रहे हैं। ३११

बाल्य राजा के शासनकाल में (बालकपन में) जो चञ्चलता पावों में था वह यौवन महाराजा (युवावस्था) के आतन से भागकर नयनों में चढ गई है। ३१२

कमल-नयन

३१३

सुन्दरी सेज सँवारि कै, साजे सकल सिंगार ।
दृग-कमलन के द्वार पै, बाधि बदनवार ॥

३१४

विक्रम अरुन मेचक बरन, गुजा बीज समान ।
किसुक मनो मनोज को, काल कूट जुत बान ॥

३१५

फूल जु फूले देखि ससि, सो इन्दीबर नैन ।
कहत जान मुख चन्द ते, ना बिछुरै विन रैन ॥

३१६

लखत लाल मुख पाइहों, बरनि सकै नहि वैन ।
लसत बदन सतपत्रसौ, सहस पत्र से नैन ॥

उस मुन्दरी ने सार शृंगार सजकर सज सँवार रखी है और आपरु स्वागत के लिए द्वार पर नयन रूपी कमल की बदनवार बांध रखी है (नामिका द्वार पर खड़ी आपकी बाट देख रही है) । ३१३

३

पू पची—चिरमी के बीज के समान लाल और काल ये विविधित नयन हैं या कामदेव के विय भर पुष्प बाण हैं । ३१४

जो फूल चन्द्रमा की देखकर फूलता है वह ददीवर नामक कमल होता है पर जान कहते हैं ये नन इन्दावर तो मुख चद्र से दिन रात कभी भी विलग नहीं होते । ३१५

मान को मुसुञ्छवि देखने से ही बनती है उसे बणन नहीं किया जा सकता है उनका मुख शतदल कमल जैसा है और घासों सहस्र पत्र जसी । ३१६

३१७

मीन ममोले मिरग पुनि, निरखत सकल लजात ।
मुख पानिप मे नैन यो, ज्यो जल मे जलजात ॥

३१८

अन देखे मुद्रित रहै, देखे तौ अति चैन ।
जगत-मित्र है रावरे, जलज हमारे नैन ॥

३१९

मुद्रित द्यबोले द्यैलके, वदन प्रभाकर आहि ।
विनु देखे मुरभे, सुलखि, दृग-पकज विकसाहि ॥

३२०

तन चपा मन केवडा, सीतल अमृत बन ।
प्राण-पुरुष के बाग मे, अजब फूल दुइ नैन ॥

३२१

जित प्रीतम तित जात है, और देखि सकुच न ।
सूरज गुल के फूल ज्यो, फिरें तिया के नैन ॥

३२२

नैन कमल पर राज ही, भृकुटी कुटिल सुभाय ।
मनहु लोभ मकरद के, मधुकर रहे जुभाय ॥

मछलिया, बीरबूटी और मृग य सभी जिन नैनो को देखकर लज्जा अनुभव करत हैं व नयन मुख के पानी (लावण्य) में ऐसे क्षोभित हैं मानो जल में कमल हों। ३१७

हे प्रिय ! तुम्हारे नयन सूर्य है और हमारे नयन कमल हैं अतएव उन्हें न देखने पर तो मुँद जाते हैं और देखकर प्रमत्त (विकसित) हो जाते हैं। ३१८

बने ठन हुए सुन्दर प्रिय का प्रसन्न मुख सूर्य के समान है उसे न देखने पर तो हमारे नयन रूषी कमल मुरझा जाते हैं और दखत हा खिल उठत हैं। ३१९

प्राण पुष्प (प्रिय) के बगीचे में देह यष्टि तो चम्पा की डाल है और मन कवड़ा की सुरभि है। प्रमत्त के समान वचनो की गीतलता है और अजीब तरह के दो नयन रूषी पुष्प वहाँ खिल रहे हैं। ३२०

य नयन बिना सकोच के (विकसित) उघर ही चले जाते हैं जिधर प्रिय हैं। सूर्य मुखी पुष्प की तरह स्त्री के नेत्र भी प्रिय की ओर फिर रहे हैं। ३२१

नयन रूषी कमला पर लगी भीड़ एसी सुभाषित है मानो पराग के लीम में

३२३

लागे करन कटाछि दृगु, जर्बाहि सचरघी मैत ।
जैसे मधुकर भारतें, नीरज डोलत ऐत ॥



जसे भीरे के भार स कमल हिनने लगते हैं उमो प्रकार, अगो मे काम का सचार होने म य दग, बटाक्ष करने लग है । ३२३



मृग नयन

३२४

खेलत मार सिकार है, डोरे पास समेत ।
नैन मृगन सो बांधिकै नैन मृगन गहि लेत ॥

३२५

सरिता-हार पहार-कुच, खेलत मदन सिकार ।
हौ बरजौ दृग मृगनुकी, ह्वीं जिन जाव गंवार ॥

३२६

बर जीते सर मन के, ऐसे देखे मैं न ।
हरिनी के नैनानु तें, हरि ! नीके ए नैन ॥

३२७

खेलत सिखए अलि भल, चतुर अहेरी मार ।
कानन-चारी नैन मृग, नागर नरनु सिकार ॥

1 डार और फाँसी लिए कामदेव शिकार खेल रहा है वह नयन रूपी मगो से ही नयन रूपी मगो को बाँधकर पकड़ लेता है । ३२४

जहा उज्ज्वल हार रूपी नदी स्तन रूपी पहाडो म बह रही है वहाँ कामदेव शिकार खेला करता है । अत मैं मेरे नयन रूपी मगो को मना करता हूँ कि 'धरे गवारो वहाँ मत जाओ । ३२५

हे हरि ! मैंने तो ऐस नेत्र कमी नहीं दख इन्होने तो कामदेव क बाणों को भी बरबस जीत लिया है और हरिणी के नयनो स भा सुन्दर हैं । ३२६

हे सखि ! कामदेव रूपी चतुर अहेरी ने कानन चारी (कानो तक लम्बे) मगो को नागरिक लोगो का शिकार करना अच्छी तरह सिखलाया है । ३२७

३२८

नेह परा मैदान तन, मन-सारंग वन अग ।
मैननि के डोरे फँदा, गहि राखत तिय सग ॥

३२९

सागी भारी नीलकी, ओट अचूक चुकै न ।
मो मनु-मृग करवर गहत, अहे अहेरी नैन ॥

३३०

प्रेम अहेरी की अरे, यह अद्भुत गति हेर ।
कीनें दृग-मृग सीत के, मन चीते पै सेर ॥



प्रमिय हलाहल मदभरे]

अग रूपी जगल व नद मदान मे पडे हुए मन मग को यह नायिका नयनों के डोरो के फदे से बाँधकर अपने साथ रखती है । ३२८

साढी रूपी भाडी की घोट होत हुए भी नयन रूपी अचूक शिकारी नहीं चूकता है और मेरे मन रूपी मूग को डूँढ लेता है । ३२९

इस प्रेम रूपी शिकारी की अद्भुत चतुराई को तो देखो, जिसने प्रिय के नयन मूगों को अपने मनचाहे पर (चहेते पर) सेर बना दिया है । ३३०

३३५

प्रभुहिं चित्तं पुनि चित्तं महि, राजति लोचन लोल ।
 खेलति मनसिज-मोन जुग, जनु विधु मडल डोल ॥



बार बार प्रभु की ओर देखते हुए भीर बार बार (लज्जा से) पृथ्वी की ओर देखते हुए चबल नया इस प्रकार घोभित हो रहे हैं, मानो चन्द्रमण्डल के हिंडोले में कामदेव का मछलियों का जोड़ा खेत रहा हो । ३३५



दृग विहग

३३६

लसत चारु तारनि सहित, तिय लोचन कमनीय ।
चढे खजरोटनि मनो, च चरीक रमनीय ॥

३३७

जरतारी सारी ढके, नैन लसति मतिराम ।
मनो कनक-पजर परे, खजरोट अभिराम ॥

३३८

खजन कमल चकोर अलि, जिते मीन मृग ऐन ।
कयो न घडाई को लहे, तरुनि तिहारे नैन ॥

३३९

रूप जाल नंदलाल के, परि करि बहुरि छुटे न ।
खजरोट मृग मीन से, व्रज वनितन के नैन ॥

नायिका के मनोहर नयन सुन्दर तारिकाओं सहित सुशोभित हो रहे हैं
मानों, खजरीट पर चढ़े हुए भ्रमर शोभा ले रहे हो। ३३६

मतिराम कहते हैं कि जरीदार साड़ी में लके हुए नयन इस प्रकार शोभा दे
रहे हैं मानों सोने के पिंजरे में खजरीट पक्षी सुशोभित हो। ३३७

जबकि खजन, कमल, चकोर, भ्रमर मीन और मग इतनी की भी इन्होंने
जीत लिया, तब ही तर्ण तर नयन क्या न महत्त्व प्राप्त करें। ३३८

खजरीट, और मग एवं मीन के समान ब्रजवाताओं के नयन, नदनाल
रूप जाल में फसकर फिर नहीं छूटते। ३३९

३४०

कजन हू तें डहडहे, बिनु अजन छवि ऐन ।
खजन गति गजन महा, पिय मन रजन नन ॥

३४१

दृग-खग लखि उन रूप कौं, उतरि फँसे छवि फद ।
गहे प्रीत पजर परे, मन बधिक आनन्द ॥

३४२

नैन-पँखेरू विरह के, फँदे पेस के जाल ।
उरभत ही चक्रित भये, उडि नहि सकत जमाल ॥

३४३

दृग खजन शौचक फँसे, बीच जुलफ के जाल ।
भावं इनको किरिचियै, भावं इनको पाल ॥

३४४

वनतन कौं, निकसत, लसत, हँसत हँसत इत आइ ।
दृग खजन गहि लै गयो, चितवनि-चैपु लगाइ ॥

३४५

सो पछी उरभै रहै, जो डोरनि संगहोय ।
डोरे खजन नैन सो, उरभै छोरे कोय ॥

कमलों से भी अधिक प्रफुल्लित ये बिना अजनवाले नेत्र गोमित हो रहे हैं
ये अपनी चञ्चल गति एक बरस से राजन का मान भंग करनेवाले और प्रिय का
मनोरञ्जन करनेवाले हैं । ३४०

नयन रूपी पत्नी रूप की देखकर उसकी छवि के फदे में फस गये हैं और उन्हें
काम रूपी बहेलिये ने आनन्दपूर्वक पकड़कर प्रीति के विजरे में ढाल दिया है । ३४१

जब नयन रूपी पत्नी वियोग रूप फटोवाले प्रेम जाल में उलझ गये, तब
आश्चर्यचकित हुए । जमान कहते हैं कि अब वे उड़ नहीं सकते । ३४२

मेरे दृग स्वजन तेरी जुल्फों के जान में फस चुके हैं अब चाहे इन्हें (तलवार की
नोक से) मार शला चाहे इन्हें पालनू बनानो । ३४३

हे सखि ! मेरे बाहर निकलने ही, वह खेलना हुआ हँसता हँसता इधर
आकर मेरे नयन-स्वजनों को अपनी चितौनी के चप म पकड़कर बन की ओर
ले गया । ३४४

जो पत्नी डोरों का माप (बधन के सहित) होता है वही उत्तमता है पर
यहाँ तो स्वजन के समान नयनों के डोरों में दूमर ही उत्तम है । ३४५

नयन तुरग

३५४

नैकु न थाकत पथ मे, चले जु फोस हजार ।
चचल लोइन-हयनि पर, भये जात असवार ॥

३५५

मानत लाज लगाम नहि, नैक न गहत मरोर ।
होत तोहिं लखि बानके, दग-तुरग मुँह जोर ॥

३५६

जहें जहें नैन सलूणिया, तहें तहें चित्त अरेह ।
मूसन खोट तुरग ज्यो, पग आगे न धरेह ॥

३५७

हुलसि चढचौ चित नागरी, नैन तुरी तुव तेज ।
नवल-नेह-मदान मे, करत फिरत मुँह मेज ॥

बचल नयन रूपी घोड़ों पर सवार होकर भने ही हजारों बौस की यात्रा कर ला
मार्ग में कहा भी बकावट नहीं आयगा । ३५४

तुझे दग्वकर उस बाला के नयन घडव मुँहजोरी करने लगने हैं जरा भी इधर
उधर मुडना नहीं चाहते और लगाम को बिलकुल नहीं मानते । ३५५

जहाँ जहाँ मनोने नयन दिखाई देने हैं वही पर इनका चित्त धड जाता है और
घडिपल घोडे की तरह एक कदम भी आगे नहीं रलता । ३५६

ह नागरी, तरे नयन रूपा तेज घोडे पर समगपूवक चडा हुआ यह चित्त, नये
प्यार के मदान में मुँहजोरी करता हुआ फिर रहा है । ३५७

३५८

लाज लगाम न मानहीं, नैना मो बस नाहि ।
ए मुँह-जोर तुरग लो, ऐंचत हू चलि जाहि ॥

३५९

अरुन जु डोरे दृगनि मे, साँटें उपरी ऐन ।
निपट चपल तातें भये, काम सधाये नैन ॥

३६०

नैन तुरगम अलक छवि, छरी लगी जिहिं श्राइ ।
तिहिं चढि मन चचल भयो, मति दीनी बिसराइ ॥

३६१

करे चाह सौं चुडुकि कं, खरें उडौहे मेन ।
लाज नवाएँ तरफरत, फरत पूँद सी नैन ॥

३६२

ताजी ताजी गतिन ए, तव तें सीखे लैन ।
गाहक मन राजी करे, बाजी तेरे नैन ॥

य नयन मेर वग में नहीं है और न लाजरूपी लगाम का ही मान रहे हैं ये मुहजार घाट की तरह लाचन पर भी प्रिय की आर चल हो जान है । ३५८

काम के द्वारा सिखाय हुए इन नयन तुरगा पर जो लाल डोरे दिखाई पड़ते हैं वे चाबुक की मार के निशान हैं और इही क कारण य इतन तज (चचल) हुए हैं । ३५९

जिन नयन रूपी घोड़ों की अलकावलि की छवि रूपी बेंतें लगी हैं उन पर चढ़कर मन और भी चचल एव विवकहीन हो गया । ३६०

चाह रूपी चुटकी से चटककर, कामदेव ने इन नयन रूपी घोड़ों को जड़ल उछल कर चलनेवाला बना दिये । अब ये लाज लगाम से रोके जाने पर भी खूँद रहे हैं और आतुर हो रहे हैं । ३६१

जब से इन्होंने नई चाला में चलना सीखा है, तभी से ये अरबी घाटा से समान तेरे नन, शाहक (चाहनवान) के मन का (धपनी चचल चालों से) आनन्दित कर रहे हैं । ३६२

दृग-मतग

३६३

मन बधन नाहिन रहत, नैना कियो करोरि ।
वर कुजर ज्यो मद बहै, चलहित सकल तोरि ॥

३६४

नारी नन गनै न जग, जनु निर अकुस नग ।
बेरी हेरी लाज की, मत्त न लगगत मग ॥

३६५

घूँघट कोट रहै न धरि, भिरि भजत जस जोर ।
नागरि-नैन कि नाग नव, उमडि चलत चहुँ ओर ॥

३६६

अति उमडै, मानै नहीं, भीहै-अकुस लाज ।
नासा-आड उलघ कं, नैन-मत्तगजराज ॥

जसे श्रेष्ठ हाथी मदमात होकर साबल तोडकर चल ही देता है, वसे ही करोड उपाय करने पर भी ये नयन मन के बन्धन में नही रहते हैं। ३६३

अकुस को न माननेवाले हाथी की तरह, नायिका क नयन भी जगत् को नहीं गिनते हैं। और मतवाले हाथी को जसे वेडी नही लगती है वसे ही इनको लाज नहीं लगती है। ३६४

हे नागरी य तेरे नयन हैं या नय हाथी हैं, जो घूँघट के किले को न गिाते हुए जोर से मिडकर उमे तोड रहे हैं और समडकर चागे धार चल पड हैं। ३६५

मौह रूपी अकुस की परवाह नही करने हुए य नयन रूपी मस्त गजराज मीसिका की झाड को लाँघकर समड उठे हैं। ३६६

३६७

जोगेस्वर गुर डर डरै, भोगी भूलै चैन ।
कहत नरिन्द करिन्द हँ, नागरि तेरे नैन ॥

३६८

भटकै लाज जजीर भुकि, पटकै सुनि मन मारि ।
दृग-मदमत्त मतग हँ, हटक रहत नहिं हारि ॥

३६९

बल तोरत सकल सकुच, पल शकुस बस है न ।
उररि अगाऊ जात है, गज मतवारे नैन ॥

३७०

तप, जप सजम, सील, सत जुगत सुगत की जात ।
इन वन कर न दयाल दिन, दृग-गयद उतपात ॥

३७१

कोरी कजरे रेख करि, जोरी जरे जेजीर ।
गोरी-दृग-गजराज गुन, भजन सजन भीर ॥

३७२

दत-कटाछि अनत सित, स्याम स्यामता जानि ।
नैन-नाग सत सील बन, खिजि, भजत बल खानि ॥

बन् बड़े सयासी योगी भी इनके डर से डरत हैं और इन्हें देखकर भोगी भी चतन भून जात हैं नरिद कहते हैं—हे नागरी ये तर नयन दो हाथियों के समान हैं । ३६७

मुनिगणों के मन द्वारा मारे जाने पर भी श्री राज रूपी साँकों से भुकाकर भटका देने पर भी य नयन रूपी दा मदा हाथी हारकर हटक में नहीं रहते हैं । ३६८

मदवाले हाथी व समान ये नयन, पनक रूपी भ्रुकुग के वग नहीं हैं । बल लगा कर जजोर (बाधन) को तोड़ देन हैं और चरबव धाग बड़ जाते हैं । ३६९

दयाल कहते हैं कि जप, तप, सयम और सत्य आदि उपामा स जहाँ मुक्ति प्राप्त की जानी है उस (शरीर रूपी) बन में, अरे नयन हाथी ! उत्थाठ न मवा । ३७०

काजन् की गेग रूपी जजोर मे वाते हुए ये गोरो के नयन, गजरात्रो की जोडी हैं जो सज्जना की भीड़ की धीरनेवाली हैं । ३७१

पूण शुभ कर्मान रूपी दानवाते एव वृष्णता स वाते वरावाले नयन रूपी हाथी बन की खान हैं वे बिदकर सय और सत्वाचार के बन की उन्नाड देत हैं । ३७२

३७३

अति मतवारे मदन-मद, हृद न रहत चित्त-चोज ।
 दारा के दृग-दुरिद ह्वै, फारत जत सत-फौज ॥

३७४

फारत तप जप फौज फिर, नैन नारि के नाग ।
 डारत डोहि दयाल कहि, मन-सर परम अथाग ॥

३७५

बाल खभाले सो बंधे, वारण-नैन विसाल ।
 वीरि न मारत देखिये, मार करत वेहाल ॥

३७६

अरुन सिंदूर भरे खरे, सकुच बाग बस हैं न ।
 जित जान तित परत है, ये जग खूनी नैन ॥

३७७

नेही-दृगतन बयो सकै, इनकी भोकें ओड ।
 मतवारे दृग गज कहै, ऐसैं दीजतु छोड ?

३७८

मद-मोक्ल जब पुलत है, तेरे दृग-गजराज ।
 आइ तमासी जुरत है, नेही-नैन-समाज ॥

काम के मन से अत्यन्त मतवाले, चिन्त की चमत्कृत करनेवाले य नायिका के नयन, हाथी हा गय है और अपनी सीमा (वग) में नहीं रहत है । य यतिपों की सत्य गीत श्राप्ति की मेना को छिन्न भिन्न कर दत है । ३७३

दयान कहत है कि नायिका क नयन स्त्री हाथी तप और जप की कीज की फिर फिर कर छिन्न भिन्न कर लेते हैं । और पूर्ण एव धाहरहित मनरूपी सरोवर को आन्दोलित कर डालते हैं । ३७४

बाला स्त्री लभे में बधे हुए य विगान नयन स्त्री हाथी दौडकर मारत हुए ता दिखाई नहीं लेत हैं परन्तु उनकी मार बुरा हान कर देती है । ३७५

मिटर नग हुए म, लाल नयन स्त्री हाथी मकीव स्त्री अकुण के वग में न रहते वान, मसार की हत्या करनवान हैं । य जहा जान पहचान हो वही जा पढते हैं । ३७६

मद से मस्त नयन स्त्री शयिया को क्या इस प्रकार खुला छाटा जाता है ? (तुम्ह जान नहीं कि) इनका भोंके (घबके) स्नेह मते नयन किस प्रकार रोकेंगे ? (सहेंगे) । ३७७

मस्ती से मुकुन्तिन हुए (स्वच्छन्द) तेरे नयन गज ब्रध खुलत हैं तब प्रभी नयनों का समूह तयागा देखन को एकत्रित हा जाना है । ३७८

३७६

मैन महावत दृग-गजन, हुलसत वाही शोर ।
लाखन मे लखि लेत है, हिय ही कौं चितचोर ॥

३८०

जब छुटत भल थान तें, मतवारे गज नैन ।
नेहिन-दल कौं चलत है, दकर ठोकर-सैन ॥

३८१

अजन आँदू सो भरे, जद्यपि तुव गज-नैन ।
तदपि चलावत रहत है, भुकि भुकि चोटें सन ॥

३८२

छूटे दृग गज मोत के, बिच यह प्रेम बजार ।
दोजी नैन दुकान के, महुकम पलक किवार ॥

कामदेव रूपी महावत इग रूपी शयिया का उमी छार बना रहा है जिस छोटे
हृदय के चोर का नाया की भीड़ में दल चुका है । ३७६

मत्त गज रूपी नर जब भी अपने भाल रूपी पीतवाने में छूटने हैं नभी प्रेमी
जनों का ठाकर मन स्वर चलत हैं । ३८०

अप्रति तुम्हार गज नयन अजन की बटिया में युक्त हैं तथापि भुव भुववर चाट
की तरह सन चतान रहते हैं । ३८१

प्रम वाजार के बीच में प्रिय के नयन गज छूट गये हैं । अत नयन रूपी दुकानों
के पलक रूपी मजबूत किचाड़ उद कर लो । ३८२

वीर नयन

३८३

भौंह कमान कटाद्य सर, समर-भूमि विचलै न ।
लाज तजे हू दुहुँनि के, सजल सुभट से नैन ।

३८४

पोहचत, टरत न सुभट लों, रोकि सकै कोउ नाहि ।
लाखन ही को भीर मे, आँख उहीं चलि जाहि ॥

३८५

नैना प्यासे रूपके, राखे रहे न ओट ।
चतुर सूरवाँ बयो बचै, करै भीर मे चोट ॥

३८६

इती भीर हूँ भेदि कं, कित हूँ हूँ, इत आइ ।
फिर डोठि जु रि डोठि सौं, सब की डोठि बचाइ ॥

दोनों के पानीपार वीर क मामान नयन लज्जा त्यागकर भीहो की कमान और कटाभों के बाएँ लकर युद्ध भूमि मे विचलित नहा हा रह है । ३८३

लाहों की भीड़ में भी इन्हें काइ नहीं रोक सकता । दूरवीर की तरह ये प्राणों भी अपने प्रतियागी के पास बिना टल पहुच जाती हैं । ३८४

रूप क प्यास नयन छिपाकर रखने पर भी नहीं रह, जैसे चतुर दूरवीर चूकता नहीं है और भीड़ में भी अपनी चोट खला दता है । ३८५

इतनी भीड़ को चीरती हुईं किधर हो स घूम फिरकर उसकी दृष्टि इधर घाती है और सबकी नजर बचाकर मरी दृष्टि स मिलकर लोट जाती है । ३८६

३८७

जे सुरा रन मे भिर, टुक टुक ह्वं जाहि ।
 ते नेही ह्वं श्रोतरै, कटत कटाछिन माहि ॥

०

जो गुरबोर रण भूमि में भिडकर टुकडे टुकडे होत है व ही जब प्रेमी हाकर इस प्रेम पथ मे म्रानत हैं तो कटावो स ही कट जात हैं । २८७



लोभी नेत्र

३८८

नेन हमारे लालचा, देख्यो चाहै तोहि ।
ना तू मिलै न सुख हुव, नातो विपत ज मोहि ॥

३८९

नेन हमारे लालची, बयो हि लगाऊँ सीख ।
जह जह देखत रूप को, तह तह मांगत भीख ॥

३९०

जस अपजस देखत नहीं, देखत साँवल-गात ।
फहा कर लालच भरे, चपल नेन चलि जात ॥

३९१

नख सिख रूप भरे लरे, तो मांगत मुसकानि ।
तजत न लोचन लालची, ए ललचौही वानि ॥

मेरे लालची नेत्र तुझे देखना चाहते हैं किन्तु न तो तेरा मिलाप हो और न हू
हो । अतः अपना तो विपत्तियों से नाता जुड़ रहा है । ३८८

ये नयन जहाँ कहीं भी रूप सौ दय दल लेते हैं वही पर भीख माँगने लग जात
हैं ऐसे लोभी नयनों को कैसे शिखा दी जाय ? ३८९

चञ्चल नेत्र, यग अग्रपश का विचार नहीं करत हैं और केवल साँवरी सुरत के
लोभ भ्रम वही चले जात हैं । ३९०

य लालची नेत्र नख सिम्ब के सौ दय स भर जाने पर भी उतकी एक मुस्कान
माँग रहे हैं और अपनी लालच भरी आदत नहीं छोड़ रहे हैं । ३९१

३६२

नयणां समो न लालची, परमुख लागे घाय ।
आग पराई आण कै, अपणे देह लगाय ॥



एत नयनो क वगउर काइ लालची नहीं दस्ता जा दूगरो क मुँह जा लगते हैं
और पराइ आग लाकर अपन शरीर म लगा लत हैं । ३६२



व्यापारी नयन

३६३

लोभ लगे हरि रूप के, करी साट जु रि जाय ।
हो इन बेची बीचही, लोयन बडी बलाय ॥

३६४

आंखिन सो आंखें मिलीं, मन जु गयो ता साथ ।
जैसे पथहि-पथ मे, ठग बेचत ठग हाथ ॥

३६५

रूप हाटरी देखि कं, गाहक भये जु नैन ।
जिय गहने घरि ले चले, विरह बिसाहि हुसेन ॥

३६६

नैना मन गहने घरघो, लह्यो रूप रसलीन ।
भाव व्याज-वारिधि बढघो छुटिबो कवन प्रवीन ॥

हरि रूप के लोभ में लग हुए इन नयनों ने उनसे मिलकर सट्टा कर लिया । ये नयन-दलाल बड़ी-बनाय हैं जो मुझे बीच ही में बेच दिया । ३६३

राम्त चलते हुए आलों से आलें मिली और एक दूसरे का मन एक दूसरे के पास चला गया जैसे कि-ही दो टगो ने माग ही में अपनी अपनी वस्तु का परस्पर विनिमय कर लिया हो । ३६४

हुमन कहते हैं कि रूप की दुकान देखकर आँसे पाहक बन गई और जीव को गिरवी रखकर विरह विसा कर ले चली । ३६५

आलो ने मन को गिरवी रखकर रूप उधार ले लिया किन्तु अब भाव रूपी ब्याज का समुद्र बड़ जाने से मन किस प्रकार छूटे ? ३६६

३६७

नैन मिले तें मन मिले, होय साठ दर हाल ।
इह तो सीदा सहज का, जोर न चलत जमाल ॥

३६८

भुँह डांडी विद्य नन पल, लट हाथा तिल पाट ।
सरफा पेम बिकात है, नेह नगर के हाट ॥

३६९

भुँह डांडी काँटी-तिलक, चल-पल पुतरी-बाट ।
तोलत मूरत मित्र की, नेह-नगर की हाट ॥

४००

भुँह डांडी तोलन तिलक, बग्नि डोर पल नैन ।
धुर-कटाद्य विद्य-मन तुलै, तोलत मूरत मैन ॥

४०१

भुँह डांडी पल नैन त्रिच रस औती सजि ताहि ।
मित्त मूरत अर गज मूरत, पासग तुली न आहि ॥

४०२

तिसरी-काँटी भुँह डांडी, हग दोउ-पत्ता बनाय ।
तोलत प्रीत दुहैन की, घटि बढि करी न जाय ॥

नयनो के मिलने स मन तो मिल ही जाता है जो कि प्रत्यक्ष बदला होता है ।
जमाल कहते हैं यह स्वामाविक व्यापार है इसमें किसी का जार नहीं चलता । ३६७

नेह नगर के बाजार में अलकावनि रूपी हाथी स पकड़ा हुई भीह की डांडी,
नयनो के पतने और तिन (आँख का तारा) के बाटोवाली तकड़ी म तुलवर प्रेम
विक रहा है । ३६८

भीह की डांडी और तिनक का बाटा एव आला क पलडों की तकड़ी म पुत
निया के बाटो मे यह नायिका नह नगर की दुकान म मित्र का सूरत तोल रही है ।
(भीह आँख पुतलियाँ, कटास चिनवन आदि आयज य भावा से नायक की चाह ले रही
है) । ३६९

भीह रूपी डांडी तिनक रूपी बाटा नयन रूपी पलड एव बारीकी रूपी डोरियों
वाते तराजू म कटास रूपा भार द्वारा शिय का मन तुल रहा है और कामदेव स्वय तोल
रहा है । ४००

उद्योति (दृष्टि) रूपी डोर से भीहा की डांडी म नयनो के पतने बंधे हुए हैं
इस तलडो म मित्र की सूरत म सारे जगत की मूर्तों भी बराबर नहीं तानी
या सकी । ४०१

इस तराजू में भीह रूपी डांडी के बीच में निलन रूपी बाटा है और ये दोनों
की प्रीति तोन रही है इसमें घटाने उठाने का प्रवकाश नही । ४०२

४०३

नैनन मूरति स्याम की, ल राखी हिय माहि ।
सो निधिउ वहइ ल रह्यो, नैकु दितावत नाहि ॥

४०४

तुम-से, तुम हौ अति भलौ,—बनिज कियो तुम नाह ।
चितवनि दंकर मन लियो, तापर श्रीफल चाह ॥

४०५

साहु कहावत फिरत है, चित सरसाए च व ।
तेरे नैन दिवालिया, मन लं देति न पाव ॥

४०६

पल पल्लौ भर इन, लियो तेरो नाज उठाइ ।
नैन हमालन दे अरी, दरस-मजूरी आई ॥



नयनो ने हमाम की सलोनी मूर्ति लेकर हृदय क पास (घरोहर रूप में) रख दी ।
उस घरोहर को हृदय ले वठा और अब किसी का आँख से नहीं दिखलाता । ४०३

ह प्रिय तुम्हारे जमे तो तुम ही हो । अच्छा व्यापार किया जो चितवन देकर
तो मन लिया और उस पर नारियल (कुच) की चाह रखते हो । ४०४

चित्त म चाह भरे हुए ये तेरे नेत्र साहूकार कहलाते फिरते हैं पर हैं ये ऐसे
दिवालिया कि जो मन (मण) लेकर बदले म पाव (पाव) भी नहीं दत है (मन लेकर
हमार यहा पाव भी नहीं देते ।) ४०५

पनक रुषी पल्ला मे इन नन-हमातो ने तेरा नाज (अनाज, भ्रदाए) उठाया है
धरी शह तरसत एपी मजूरी दे ३ । ४०६

नयन संन्यासी

४०७

अर बराय पिय गमन सुनि, अरुण बरन चल चीन्ह ।
मानों नयन उवास ह्वै, बसन भगोहे फीन्ह ॥

४०८

हरि पिय प्यारे के चलत, भये विगबर नेन ।
मौजी इक टक अज बधू रही ठगी सी ऐन ॥

४०९

सम्मन जोगी में भया, विरह-नाथ के साथ ।
भिक्षा माँगूँ प्रेम की, नन पतर ले हाथ ॥

४१०

दृग-जोगी पलक-जटा स्याई-भसम लगाइ ।
रूप भीख के लालची, जित देखें तित जाइ ॥

प्रिय के गमन की बात सुन, घबडाकर तान रग हुए नयनों को देखो ? मानो उदासी (एक प्रकार क साधु) हाकर इहोंने भगव वस्त्र धारण कर लिए हा । ४०७

मानवित ब्रज बाला प्रिय हरि के जाने पर एक नकटकी नगाये बिलकुल ठगी हुई सी रह गई, और उसके नयन दिग्बर (नगे साधु) हो गये (पलक रहित होगये) । ४०८

समन कहते है कि विरह रूपी नाथ का साध पाकर मैं योगी हो गया और नयन का पात्र लेकर प्रेम की मिथा माँगता हूँ । ४०९

य रूप की मिथा क लोभो नयन, पलकों की जटा और सुरमे की भस्म लपेट कर योगी बने हुए जहाँ रूप देखते हैं वहीं जा पहुँचते हैं । ४१०

४११

रूप नगर दृग जोगिया, फिरत सु फेरी देत ।
छवि कन पावत है जहाँ पल भोरी भरि लेत ॥

४१२

दृग-जोगी जगदीस के, काम-सिद्ध के सीख ।
सु दर नगरी मे फिरै, लेत रूप की भीख ॥

४१३

पलकनि-मठ मधि ध्यान धरि वरुनी जटा बनाय ।
नैन दिगम्बर ह्वै रहे, रूप विभूति लगाय ॥

४१४

पलक-वसन दरसन-असन, जल-वित निस सुख चैन ।
ए तजि सुन्दरि स्याम बिनु, भये दिगम्बर नैन ॥

४१५

जोग जुगति सिखए सबै, मनो महा मुनि मैन ।
चाहत प्रिय अद्वैतता, सेवत काननु नैन ॥

४१६

दृग-द्विज ए उठि प्रातही, करि अंसुवन असनान ।
रूप-भूष पै जाचही, छवि मुकताहल दान ॥

रूप की नगरी में हग जोगी फेरी दते हुए फिरते हैं ये जहा भी छवि रूपी कण (अन्न) पात हैं वही पलकों की झोली भर लेत हैं । ४११

जगदीश के यागी नयन, सिद्ध काम दब के गिप्प हैं और सौन्दर्य की नगरी में रूप की मित्रा लते हुए फिरते हैं । ४१२

सौन्दर्य का विभूति लगाय बरीनियो की जग बढाये हुए पनको क मठ में ध्यान लगावत ये नयन दिगबर हो रह है । ४१३

हे सखि ! दयामनु-दर क विरह में ये नयन, पलक रूपी वस्त्रा को, दशन रूपी भोजन को तथा जल (आँसू) रूपी घन का एव रात्रि के सुख चन निद्रा को त्यागवत दिगम्बर स-याता हो गये हैं । ४१४

नयन रूपी योगी श्रवण रूपी बन का सवन करने लगे हैं मानो कामदेव रूपी महायोगी द्वारा योग (सयोग) की सारी युक्तिया मिछाये हुए हैं और प्रिय (परमात्मा) से अश्रितता चाहते हैं । ४१५

ये नेत्र खाल डोरो का जनक गले में डालकर पनक रूपी हाथ पसार, रूप का दान मागत रहते हैं । ४१६

४१७

अरुन तगा के नैन जनु, गरे जनेऊ डारि ।
 रूप दान मागति रहै, ए पल करन पसारि ॥



ये नयन-ग्राह्यण प्रातः काल उठकर आसुषो से स्नान करके रूप-राजा के पास छबि-दरसन रूपी मोती का दान मागते हैं । ४१७



चित-चोर नयन

४१८

चित वितु बचतु न हरत हठि, लालन नग बरजोर ।
सावधान के बट परा, ए जागति के चोर ॥

४१९

कहाँ कहा या चोर की, चोरी सबतें बाढि ।
तन भूसन सब छाँडि कै, लीनौ मन ही काढि ॥

४२०

जब तें नैनन पिय परे, तब तें गति कछु और ।
मन खोयो तन सुधि नहीं, करघो लागि न यह चोर ॥

४२१

कैसे मन धन लूटते, भावन्तां के नैन ।
मन मथ जो देतो नहीं, इन कर बरछी सैन ॥

लाल के हठी नयन जबरदस्ती से चित्त रूपी धन का हरण कर लेत है और कुछ
मा नहीं बचता है। ये मन जागतवान के लिए चोर एव सावधान रहनवाले के लिए
दाकू है। ४१८

इस नयन चोर की चोरी का क्या बखान करें ? यह चोरी सब चोरियों से बटकर
है। इसने शरीर और आभूषण आदि ता सब छोड़ दिया और मन निकालकर ले
गया। ४१९

जब म इन आखा म प्रिय आय है तब स कुछ और ही दगा हो रही है—मन
ला गया है, शरीर की कोई मुधि नहीं और चोर हाथ नहीं आ रहा है। ४२०

मन रूपी धन को प्रिय व नेत्र किस प्रकार लूट सकते थे यदि ममथ (काम)
सन (बटास) रूपी बरछा इन्हें नहीं दता। ४२१

४२२

प्यारे नैन की कथन, कसे कहों कवित्त ।
खिनक साह खिन चोरटा, खिन बैरी खिन मित्त ॥



प्रिय क नमना के विषय में किस प्रकार काव्य रचना की जाय ? क्षण में ता भल साहूकार दीक्षत है और क्षण में चोर । एक क्षण में शत्रु है ता दूसर क्षण में मित्र । ४०२



अनुक्रमिका

	पृष्ठ स	दोहा स		पृष्ठ स	दोहा स
अग्निया अटकी	६	१४	असिसदेत	३४	६१
अँसुबनि क परवाह	७८	१६१	अहमद पच्यो	६८	२३८
अटपटिबात	४	१०	अखिन सौं अखि	१७२	३६४
अति उमड	१५६	३६६	असुडरत	१०४	२५२
अति मतवारे	१६०	३७३	अज कछु और	४६	१२५
अनदेखे मुझि	१३२	३१८	आठ पहर साठों	७६	१८६
अनियार तीस	१२२	२६४	आनंद आसुन	६६	२३१
अनियार भार	३६	६७	आपुलपति वेचति	१२	२६
अनियारे मारेमदन	३८	६८	आये जोवन के	२०	५३
अपनी अपनी	११६	२८३	आली अचल ओट	१४८	३४७
अमिय हलाहल	४२	११५	आहि ताहि कब	६०	२११
अमिय हलाहल	४४	११६	इती भीर हू भेदि	१६४	३८६
अमिय हलाहल	४४	११७	इन दुखिया अँसिमा	६२	२२१
अमिल रहू नहि	३८	६६	उदय नननि	४	११
अरबराय पिय	१७८	४०७	एक दिना देखे	५६	१४६
अरुके हग	३८	१०३	एक दीप सो गेह	२०	५१
अरुन जु डोरे	१५४	३५६	एकुतो नैना मद	११६	२८८
अरुन तगाके	१८२	४१७	ए पलक भइ	२८	७१
अरुन वरन	६६	४१७	ऐँचति सी चितवनि	३६	६
अरुन सिडूर	१६०	३७६	ऐँचि आँचि राखी	१२८	३०
अनि इन लोमन	१२४	३०३	और कछु सुभ	६०	१५
अवलाकनि मग	१०४	२५१	और रसन ल	१२	३
असित रात	४२	११४	और हखनि और	६२	२१

	पृष्ठ स	दोहा स		पृष्ठ स	दोहा स
भजन भ्रातृ सौं	१६२	३८१	क्यों बसिय क्यों	६०	२१६
भजन जुत भ्रमुवानि	६८	२३४	छान पान भावै	१०६	२६१
भजन देत सताक	१४८	३४८	खिच मान अपराध	४८	१३२
कत लपटैयतु	६८	१७०	खेलत मार सिकार	१३६	३२४
कतसकुचत	७०	७८	खेलन सिखये	१३६	३२७
कपट सतर	४८	१३३	खजन कमल	१४४	१३८
कर धमनी कर	१८	१०	गही कुदुम की	५०	१३४
करे चाहु सौं	१५४	३६१	गोपिनु के भ्रमुवानि	१०६	२५८
कहत सब कवि	२८	७०	घट बढ इनर्म	२	५
कहा कर जो भ्रागुरी	११२	२७५	घन पाटी दामिनी	१०२	२५०
कहा कही तो सो	१४८	३५१	घूँटट कोट रहै	१५६	३६५
कहा लडते हग	८	२१	घूँटट गट की	६२	१६१
कहौं कहा या खोर	१८४	४१६	चकी जनी सी	५०	१३७
काके रँग सुम	१०८	२६७	चख सर छत	१२०	२६३
काजर तें कारे	१०२	२४६	चतुर चितेरे	११२	२७४
काजर धौं सो	८	२३	चतुरनि बडर	१२०	२८८
कितो कियो पावन	७२	१७६	चपल चित	११८	२८५
क्रिय मरोसो नन	१२६	३०७	चमचमातचचल	१४०	३३१
कुच गिरी बडि	६२	१६३	चलत ललित	४६	१२७
क वा भ्रावत	६०	१५६	चली जात चितवत	१२०	२६०
कस मन धन	१८८	४२१	चली, चल छुटि	७४	१८५
कमल कमलन	११८	२८४	चित चकमक	१०८	२६६
कोरि जतन कीज	१६	४४	चितवत जितवत	३४	६१
कोरी कजरे रेल	१५८	३७१	चितवनि तरी	४०	१०६
कोन बसति है	५५	१५६	चितवितु बचनु	१८४	४१८
कोन मखी भघ	११०	२७०	चिता चमक	६२	२१८
कजन दू तें दह	१४६	३४०	चचलता पावन	१८	३१२

	पृष्ठ स	दोहा स		पृष्ठ स	दोहा स
छिरके नाह नवोड	६६	१६६	जोग जुगति	१८०	८१५
छीनी छवि मग	१२	३०	जोगस्वर गुर	१५८	३६७
छुन साजन	४६	१२३	जा निरखी तो	८८	२०६
छूटे हग गज	१६२	३८२	जौलों वे हग	६०	२१३
जगत जनापी	६	१७	जान गाय तें लेत	११०	२७२
जगन समभिक	१४	३५	ज्यों जल सीचत	२०	५१
जगन समुक्ति है	१४	३६	ज्यों ज्यो नन	१०६	२६०
जग बस कीनो	४०	१०८	ज्यों मन मेरो	६२	२२०
जदपि चवाइनु	४८	१२६	भटके लाज जजीर	१५८	३६८
जब छूत मल	१६२	३८०	भूठे जानि न	२८	७१
जबतें नैनन	१८४	४२०	डारे ठोडी गाढ	६४	१६६
जब तें मा उपर	५२	१६३	ढरत न अमुभा	१०६	२५५
जब पल भावे	७८	१६४	ढरे ढारते ही	३४	६०
जब लग जुग	४४	११८	तकि री मुखकी	८०	२००
जब मुमरों तुष	१०६	२५६	तन चपा मन	१३२	३२०
जमना तरकत	८४	२२३	तन तावन गावन	१०४	५१३
जमला बठयाधौतर	२४	६०	तन मन तलफन	६२	२२२
जरतारा मारी	१४४	३२७	तन मरो सबल	३०	७४
जस अपजस	१६८	३६०	तनिक् किरकिरी	३८	१००
जहें जहें नन	१५२	३५६	तप जप मजम	१५८	३७०
जित प्रीतम तित	१३२	३२१	तपति बुमी तन	३६	६०
जिन नननि रस	६४	२२५	तप्यो घांच बम	१०६	२५७
जोम बसोटी स्वाद	१८	४६	तक्षण कोकनद	६८	१७३
जे तब होत	५०	१३६	तलपि सज सवप	८०	१०७
ज नना न मुहा	४०	१०६	तनफन घानि	५०	१४१
जे सूरत रन में	१६६	३८७	ताजी ताजी गति	१५४	३६२
जो कणु अपजत	१२	३१	निय कित कमनती	१२६	३०६

	पृष्ठ स	दोहा स		पृष्ठ स	दोहा स
तिय तुव नन	११०	२७१	दोइ मोचन दोइ	१५०	३५३
तिसरी काटी भुँहे	१७८	४०२	दत बटाछि अनत	१५८	३७२
तीन पढ जाके	२	३	नद मन्दन क	१०	२७
तुमगिरी लै नख	२	४	न करू न डरू	७४	१८५
तुम से तुम ही	१७६	४०४	नख सिख रूप	१६८	३६१
तुम सौं बीज मान	७०	१७७	नयन हमारे रहेंट	१००	२३६
तुष्ट सुरत कंस	१८	४६	नयणा समो न	१७०	३६२
तुव तन सागर	१४०	३३२	नय विरह भसुवा	६८	२३६
तूँ जु दुरावति	१८	४५	नयिनमलिन	२८	६६
वकित भये पिय	८४	२०२	नहि नचाइ चित	७२	१८०
वरसन ही की भूख	२	६	नागरि नन कमान	११८	२८७
दिन दिन दुगुन	५२	१४४	नागिन पुतरी	३२	८१
दीन हीन नेही न	११६	२८१	नारी नन गर्नन	१५६	३६४
दूरमो खरे समीप	४८	१३१	निसिदिन इक	६४	२२४
दृग उरभत	८२	१११	नीद देगिजन	७६	१६०
दृग खग लगि	१४६	३४१	नीद भरी पन	७८	१६५
दृग खजन भौषक	१४६	३४३	नीची ये नीची	१४८	३५०
दृग जोगी जगदीग	१८०	४१२	नेक हँसीही बान	५०	१३६
दृग जोगी पलक	१७८	४१०	नेह परा मगान	१३८	३२८
दृग दुति दमकनि	५०	१३५	नेह रूँख बोयो	७२	१८२
दृग द्विज ए उठि	१८०	४१६	नेही दृग तन	१६०	३७७
दृगनु लगत	१०२	२६८	नेहन ननन	१००	२४१
दृग लोभी हरि	६	१३	नकु न घावत	१५२	३५४
दृग लीन मीठे	४४	११८	नन उदासी चित	८८	२१०
दसत कछु कौतिग	८०	१०८	नन कमल पर	१३०	३२०
दसत रूपहि वकित	३६	६४	नन कही नना	१४	३३
दक्षिपरसपर	३२	८२	नन किलकिला	१५०	३५२

	पृष्ठ स	दोहा स		पृष्ठ स	दोहा स
नैन तुरगम	१५४	३६०	नना देइ बताइ	२०	५१
नैन नदी और पुल	३०	७२	नना नेक न मान	५६	१४०
नैनन मूरति	१७६	४०३	नना पकज अरुण	६६	१६६
नन निरखिपिय	१०२	२४५	नना प्यासे रूप	१६४	३८५
नैन नन की	१६	३६	नना प्रिय के नाग	३२	८०
नन पखेरूह विरह	१४६	३८२	नना बडी बलाय	६०	२१४
नन बान जाको	१२०	२६२	नना बरजे ना रहै	५८	१५२
नन बान चलिबो	१२०	२८६	नना मन महने	१७२	३६६
नन महल बरनी	३०	७७	नना मित्या सु	२४	५६
नन मिले जे	५८	१५१	पग परसन को	८८	२०८
नन मिले तें मन	१४७	३६७	परी बाल मुख	३४	८८
नन मिले तो	२४	५८	पलक बसन	१८०	४१४
नन मीन बह	१४०	३३३	पलकनि मठ	१८०	४१३
नन रसीले	१४	३४	पल न लगत	७८	१६३
नन लगे तिहि	३६	६५	पल पल प्रीति	६४	२२६
नन सवन मिलि	७०	१७५	पल पल्लो भर	१७६	४०६
नन सलौने मोहिन	२६	६३	पल सौहै पग	४६	१२६
नन हमारे जलि	१०	२६	पाणि पलक कुग	१०८	२६३
नन हमारे रसिक	४४	१२०	पाणिप पूर पमोधि	६६	२३२
नन हमारे लालची	१६८	३८८	पाणिप पूर पयोधि	६८	२३३
नन हमारे लालची	१६८	३८६	पिय कौ चचल	१२८	३१०
नना अटके नेह	६४	१६५	पिय चलतेतिय	१०४	२५४
नना अतरि आचरु	८	२४	पिय मुख पकज	६८	१७१
नना अतरि आवतू	१०	२५	पिय वियोगतिय	६८	२४०
नना अदरि पठि	५२	१४०	पिय सौनी जिय	७२	१८३
नना बेरी प्रीत	२४	६१	पम पगे रसके	६२	२१६
नना छविकी	२२	५७	पोहचत टरत न	१६४	३८४

	पृष्ठ स	बोहा सं		पृष्ठ स	बोहा सं
प्यारे मननकी	१८६	४२२	मली बुरी पहि	१४	३८
प्रभुहिचिर्त	१४२	३३५	भामिनि भौह	१२६	३०६
प्रीत तुम्हारी	३०	७६	भावता मन भावता	१८	४८
प्रीतम चैनन में	१२०	२६९	भोतर के गुन	११६	४८
प्रीत लगी अति	३२	८४	मुँह कमान	१२२	२६८
प्रीत सब कोऊ	५८	१५३	मुँह गिलोल	३०	७६
प्रीति प्रकटवा	१६	४२	मुँह ढाँडी तोलन	१७४	४००
प्रेम अहेरी की	१३८	३३०	मुँह छोटी काँटी	१७४	३६६
प्रेम दुराये ना	२०	५४	मुँह ढाँडी पल	१७४	४०१
फारत तप अप	१६०	३७४	मुँह ढाँडी विव	१७४	३६८
फूल जु फूले	१३०	३१५	भृकुटी मट बनि	४	७
फूले फटकत	३४	८७	भौह कमान	१६४	३८३
बडे आपने	८४	२०३	भौह कुटिल	११२	२७३
बढी मन्द अरविन्द	३८	१०१	भौह चाप अलकै	१२४	३०१
बनक हि निरखे	४	१२	भौह धनुष कज्जल	१२४	३००
बसतोरत सकल	१५८	३६६	भौह धनुष मन्मथ	१२६	३०८
बहके सब जिय	८२	१६६	मत खलाठ मी	५२	१४१
बहुषा वरी गोत	८४	२०६	मद मोकल जब	१६०	३७८
बान बना पेना	६८	१७४	मन बघत	१५६	३६३
बान बेधि सब	१२२	२६५	मन भोहन नैना	६	१५
बाल कहा साली	६६	१६८	मन राख्यी बीराय	५६	१५०
बाल लभा ले सों	१६०	३७५	मन ही मन दुख	१०८	२६५
बिम देखे हुख	६८	२३७	मानत लाज लगाम	१५२	३५५
बिछुरत रोवत	६६	२३०	मान गुमान सब	७२	१८४
बुरी तक साग	११४	२७६	मान सरोवर प्रेम	३०	७८
ब्रह्म निगुण	२	१	मिलि छन सों मन	१८	४७
भरी अमित छवि	१०	२८	मीन ममीले निरग	१३२	११८

	पृष्ठ स	बोहा स		पृष्ठ स	बोहा स
मुदित छबीले	१३२	३१६	रूप दखि लगचात	८२	२०१
मूरत ही मूरत	६४	२२७	रूप धार घनश्याम	४	८
मगज लजे	२६	६६	रूप नगर दृग	१८०	४११
मर दृग वारिद	६८	२३५	रूप बैस मदिरा	८२	१६८
भेरे नैननि सौं	८६	२०४	रूप सरूपजु	७६	१८८
भेर बरजे ना रहैं	५८	१५४	रूप हाटरी देखि	१७२	३६५
मरो जिय तरसत	७०	१७६	रे मन रीति विचित्र	११४	२७०
मन महावन दृग	१६२	३७६	लखत लाल मुख	१३०	३१६
मैं जबके दरसे	६२	१६०	लखि अरुभे	७८	१६६
मैं तो सो क वा	६०	२१५	लटपटात लट	१००	२४२
मैं ही जायो	६४	२२८	लसत चाह	४४	३३६
मोतीपियक	२८	७२	लाख लोग म जानिए	२०	५२
मोहि कहत मन	६८	१७२	लागत कुटिल	१२०	२६१
भूँ रहीन सुख	८६	२०५	लागे करन बटाछ	१३४	३२३
यो छवि पावत है	११४	२७८	लाज लगाम न	१५४	३५८
रमता अटके	६२	१६२	लाल तिहारि नन	११८	२८६
रवि बदी कर	८	२०	लाल तिहारि रूप	७६	१८७
रस सिंगार मगनु	२६	६२	नाल तिहारि सग	४०	११३
रही अचल सी	३८	१०२	लाल पियाके	७८	१६२
रहै निगोडे नन	६०	१५८	लीने हू साहस	४६	१२२
रखौ चकित चहुँघा	३२	८३	लोभ लाज डर	५८	१५६
राधा के दृग	११०	२६६	लोचन खजन	१०६	२६२
राधा माधा वदन	६	१६	लोचन चाह चकोर	२६	६७
रवत न खजन	१४८	३४६	लाचन नैक अघात	२६	६४
रुत राखी मिस	४६	१२४	लोभ लग हरि	१७२	३६३
रूप जाल नद	१४४	३३६	लोयन लागे	१२२	२६६
रूप ठगारी	११४	२७६	लीने मुहँ दीठि न	५०	१३८

पृष्ठ स	दोहा स		पृष्ठ स	दोहा स
न तन कों	१४६	३४४		
र जीते सर	१३६	३२६	५८	१५५
गिना कहा	४२	४१२	१२४	३०२
रक विधि ह	४४	१२१	१३८	३२६
वारों बलि तो हग	२८	६८	१७६	४०५
विक्रम अरुन	१३०	३१४	२	२
विरह अगन नना	१०२	२४७	६४	३७
विरह अगनि तन	१०४	२५६	८	२२
विरही सोयन में	१४०	३३४	१३०	३१३
वे चितवत मो	५६	१४७	१८६	३८५
सगति दोष	३२	८५	१४८	३४६
समुचि न रहिये	१२८	३११	१०८	२६८
समी तुम्हारे हग	५२	१४२	४	६
सखी प्रिया की देह	११६	२८३	१००	२४४
सखी सखें दुरि	८०	१६७	१००	२८१
सखनी सब जग	३६	६२	६०	२१२
सब भग करि	३४	८६	१६	४३
सबल कहै बठी	१६	४१	४८	१२८
समान खारे नन	१०२	२४८	७२	१८१
समुझाए समुझत	१०८	२६४	८	१६
सम्मन जोगी में	१७८	४०६	६	१८
तरल तरल	२६	६५	१७८	८०८
रिता हार पहार	१ ६	३२५	८८	२०७
रिति बदनी सुदर	१२४	३०५	११२	२५७
ही रगीन रति	४८	१३०	८०	११०
ची प्रीत सखी	४०	१०५	२८६	१०२
			६६	२०६
		साजे मोहन मोह		
		सायक से मायक		
		सारी भारी नील		
		साहू कहावत		
		सिख विरचि सुर		
		मुनत निहारत		
		सुदर भुखद		
		सुदरि सेज सवारि		
		सो पछी उरभें		
		सोहन खचल		
		दयाम तिहारे विरह		
		दयाम बरन नननि		
		खवन रहत हैं		
		खवन मुनत		
		खवन मुझी रमना		
		हंसत नही बोलत		
		हसि हँसाई उर		
		हम हारीं क क		
		हरि अविजल		
		हरि दख्यो बहूँ		
		हरि पिय प्यारे		
		हियो जरायो बाल		
		हुलसि चख्योचित		
		है हिय रहति		
		होत रहै निनि निनि		
		हों न कह्यु मुम		

	पृष्ठ स	बोहा स		पृष्ठ स	बोहा स
मुदित खनील	१३२	३१६	रूप देखि लसचात	८२	२१
मुरछ ही मुरत	६४	२२७	रूप धार धनश्याम	४	९
मृगज लजे	२६	६६	रूप नगर हग	१८०	४११
मर हग बारिद	६८	२३५	रूप बैस मदिरा	८२	१६८
मरे नननि सौं	८६	२०४	रूप सरूपजु	७६	१८
मरे बरजे ना रहैं	५८	१५४	रूप हाटरी देखि	१७२	१६१
मेरो जिय तरसत	७०	१७६	रे मन रीति विचित्र	११४	१७७
मन महावत हग	१६२	३७६	सखत लाल मुख	१३०	३१८
मैं जबके दरसे	६२	१६०	सखि प्ररुभे	७८	१६१
मैं तो सो क वा	६०	२१५	सटपटात सट	१००	२५२
मैं ही जायो	६४	२२८	ससत चाव	४४	३३१
मोतीपियक	२८	७२	सख लोग मे जानिए	२०	१२
मोहि कहत कत	६८	१७२	सागत कुटिल	१२०	२६१
मूँ रहीष सुटा	८६	२०५	सागे बरन कटाछ	१३४	३२३
यों धरि पावत है	११४	२७८	साज लगाम न	१५४	३५८
रमता अटकै	६२	१६२	साल तिहारि नन	११८	२८६
रवि बदी कर	८	२०	साल निहारि रूप	७६	१८७
रस सिगार मजनु	२६	६२	साल तिहारि सग	४०	११३
रही अचल सी	३८	१०२	साल पियाके	७८	१६२
रहै निगोडे नन	६०	१५८	सालिने हू साहस	४६	१२२
रह्यौ चकित चहुधा	३२	८३	साल लोक लाज डर	५८	१५६
राधा के हग	११०	२६६	साल लोचन खजन	१०६	२६२
राधा माधा बदन	६	१६	साल लोचन चारु चकोर	२६	६७
रुवत न लजन	१४८	३४६	साल लोचन नैक प्रघात	२६	६४
रुख रबी मिस	४६	१२४	साल लोभ लग हरि	१७२	३६३
रूप जाल नन	१४४	३३६	साल लोयत सागे	१२२	२६६
रूप ठगारी	११४	२७६	साल लीने मुहें दीठि न	५०	१००

	पृष्ठ स	बोहा स		पृष्ठ स	बोहा स
न तन को			साजे मोहन मोह	५८	१५५
र जीते सर	१४६	३४४	सायक से मायक	१२४	३०२
बाजिद कहा	१३६	३२६	सारी भारी नील	१३८	३२६
बारक बिधि हू	४२	४१२	साहू बहावत	१७६	४०५
बारों बलि तो ह्य	४४	१२१	सिव विरचि सुर	२	२
विक्रम भ्रमन	२८	६८	मुनत निहारत	१४	३७
विरह भ्रमन नना	१३०	३१४	सुन्दर भुवद	८	२२
विरह भ्रमनि तन	१०२	२४७	सुन्दरि सेज सवारि	१३०	३१३
विरही लोयन म	१०४	२५६	सो पद्मी चरभों	१४६	३४५
के चितवत भो	१४०	३३४	सोहन चवल	१४८	३४६
सगति दोष	५६	१४७	श्याम तिहारे विरह	१०८	२६८
सकुचि न रहिये	३२	८५	श्याम वरन नननि	४	६
सायो तुम्हारे ह्य	१२८	३११	खवन रहत हैं	१००	२४४
सखी प्रिया की देह	५२	१४२	खवन मुनत	१००	२४१
सखी लखें डुरि	११६	२८३	खवन सुखी रसना	६०	२१२
सखी सब खग	८०	१८७	हंसत नहीं बोलत	१६	४३
ख भ्रंग करि	३६	६२	हंसि हूँसाई चर	४८	१२८
सवल कहै बठी	३४	८६	हम हारीं क क	७२	१८१
समान नारे नन	१६	४१	हरि छविजल	८	१६
समुभाए समुभक्त	१०२	२४८	हरि देख्यो कहुँ	६	१८
सम्भन जोगी मैं	१०८	२६४	हरि पिय ध्यारे	१७८	४०८
सरल तरल	१७८	४०६	हियो जरापी बाल	८८	२०७
सरिता हार पटार	२६	६५	हुँलसि चढ्योचित	१५२	३५७
सखि बदनो सुन्दर	११६	३२५	है हिय रहति	४२	११०
सही रगीन रति	१२४	३०५	होत रहै दिन निन	२४६	१०२
साँची प्रीत लखी	४८	१३०	हो न कहत तुम	६६	२२६
	४०	१०५			